विषय सूची

सुख की प्राप्ति का मार्ग

१. दुःख और विपत्ति से पाठ।

दुःख, शोक और अशांति जीवन के साथ लगे हुए हैं। दुनिया में ऐसा कोई भी मनुष्य नहीं है, जिसके हृदय में कभी दुःख का कांटा न चुभा हो, जिसने कभी आपत्ति के गहरे समुद्र में गोते न लगाए हों और जिसने कभी असह्य दुःख के कारण आंसू न बहाए हों। कोई ऐसा घर नहीं जिसमें रोग और मृत्यु रूपी भयंकर शत्रुओं ने प्रवेश न किया हो और एक हृदय को दूसरे हृदय से पृथक करके दुःख और शोक की चद्दर फैला दी हो। संसार में जितने प्राणी हैं थोड़े बहुत सभी किसी न किसी दुःख में ग्रसित हैं। किसी को कोई दुःख है, किसी को कोई दुःख है। गुरु नानक ने सच कहा है :—

"नानक दुखिया सब संसार, सो सुखिया जिस नाम अधार।"

इन दुःखों से छुटकारा पाने के लिये अथवा इन्हें किसी भांति कम करने के लिये लोग न जाने कैसे कैसे उपा करते है और सुख की प्राप्ति के लिये किन किन मार्गों अवलम्बन करते है। कुछ लोग विषय-वासना मे सुख मानते है। कुछ जिह्वा के स्वाद मे ही आनन्द मानते है। बहुत मनुष्य धन सम्पदा और मान मर्यादा का ही दुनिया की स वस्तुओं मे उत्तम समझते है और रात दिन उन्ही की प्रा के अर्थ उद्योग करते रहते है। कुछ लोग प्रेम-भी है वि. धार्मिक कार्यों के करने मे ही सुख मानते है। सावार्थ प्रत्ये मनुष्य अपने विचारानुसार भिन्न भिन्न बातो मे सु समझता है और उन्ही द्वारा सासारिक दु.खों मे मु होने और सुख प्राप्त करने की अभिलाषा रखता है।

कुछ समय के लिये मालूम होता है कि जिस सुख की प्रा के लिए मनुष्य ने उद्योग किया था वह उसको मिल गया, उसकी आत्मा उस सुख मे निमग्न हो जाती है, क्षण भर के लिए अपने सम्पूर्ण कष्टों को भूल जाती है। प. हाथ शीघ्र ही कोई न कोई रोता या शोक धीरे धीरे उस आक्रमण करता रहता है, या कोई भारी आपत्ति अकस्म उस पर आ पडती है जो उसके कल्पित सुख को राख मे मिला देती है।

इस प्रकार मनुष्य के प्रत्येक सुख का विच्छेद करने के लिए दुःख की तीक्ष्ण तलवार सदैव उसके सिर पर लट रहती है और जो मनुष्य ज्ञान से शून्य है, उस पर गिर उस की आत्मा को छिन्न भिन्न कर देती है।

देखो, बच्चा चाहता है कि मै बड़ा हो जाऊं, शीघ्र ही

सा पुरुष बन जाऊं। स्त्री पुरुष बचपन के सुख को स्मरण करते है। निर्धन मनुष्य अपनी निर्धनता बन्धन में जकड़ा हुआ है और धनवान मनुष्य को सदैव इस बात का भय लगा रहता है कि कहीं मैं दीनता के चुंगल में न फंस जाऊं अथवा वह किसी काल्पनिक सुख की इच्छा करता हुआ संसार में मारा मारा फिरता है। कभी कभी आत्मा को यह अनुभव होने लगता है कि अमुक धर्म का ग्रहण करने, अमुक सिद्धांत का स्वीकार करने अथवा अमुक आदर्श को हृदय में स्थापित करने से उसे अक्षय सुख और शांति की प्राप्ति हो गई है, परन्तु पीछे किसी भारी लोभ या लालच के वशीभूत आत्मा को वही धर्म असत्य और अपूर्ण प्रतीत होने लगता है, वही सिद्धान्त निरर्थक ज्ञात होता है और वही आदर्श जिस की काल्पनिक मूर्ति की वह वर्षों से भक्ति और उपासना कर रहा है, क्षण भर में खण्ड २ हो कर उसके पैरों में गिर पड़ता है।

अब प्रश्न यह है कि इस दुःख और शोक से छुटकारा पाने के लिए क्या कोई भी उपाय नहीं है? क्या कोई भी ऐसे साधन नहीं है कि जिससे आपत्ति के बन्धन को काट सकें? क्या अक्षय सुख और शांति का विचार करना भी अज्ञानता है? नहीं, ऐसा नहीं है। एक उपाय है कि जिससे सदैव के लिए दुःख रोग और शोक का नाश किया जा सकता है, निर्धनता का नाश हो सकता है और ऐसे अक्षय और स्थायी सुख की प्राप्ति हो सकती है कि फिर कभी निर्धनता आने का भय नहीं रह सकता। वह उपाय यह है कि पहले दुःख और आपत्ति का ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त किया जाए और उसकी असलियत का पता लगाया जाए।

दुःख को भुलाना या उस से बेसुध होना ठीक नहीं है। आवश्यकता यह है कि उसको अच्छी तरह से समझा जाए। प्रायः देखा जाता है कि बहुधा मनुष्य आपत्ति के आने पर ईश्वराराधन किया करते है कि जिससे उनका क्लेश दूर हो जाए, परन्तु यह काफ़ी नहीं है। आवश्यकता यह है कि वे इस बात को मालूम करे कि उनके ऊपर क्या विपत्ति आई और उससे उनको क्या शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये जिन बन्धनों मे तुम जकडे हुए हो, उन पर क्रोध करना अथवा चिड-चिडाना व्यर्थ है। तुम्हे उचित यह है कि तुम इस बात का पता लगाओ कि तुम क्यों और किस भांति विपत्ति-जाल में आ पडे। अतएव पाठको, तुम अपने को दुनिया के इस गोरखधन्धे से निकाल कर अपनी हालत को अच्छी तरह से सोचो और समझो।

अब तुम्हें अनुभव रूपी स्कूल मे लडके की भांति नहीं रहना चहिये, किंतु धैर्य और नम्रता के साथ उन पाठों को सीखना चाहिये जो तुम्हारे हित के लिये और तुम्हे उच्च और उन्नत अवस्था पर पहुँचाने के लिए दिये जाते है, कारण कि विचार करने से मालूम हुआ हे कि दुःख या आपत्ति इस संसार मे कोई अनन्त या अपरिमित शक्ति नही है, किंतु मानुषी अनुभव की एक क्षणिक अवस्था है और इस कारण से जो लोग सीखना चाहते है उनके लिए यह गुरू या शिक्षक के तुल्य है। संसार मे दुःख या आपत्ति तुम से कोई पृथक वस्तु न है किंतु तुम्हारे हृदय का एक अनुभव है और जब तुम धैर्य साथ अपने हृदय की अच्छी तरह से परीक्षा करोगे और उ सद्‌मार्ग पर लगाओगे, तो तुम्हे धीरे धीरे इस बात का पता ल

जाएगा कि विपत्ति क्यों आई और कैसे आई और तुम उसका अवश्य जड़ मूल से नाश कर सकोगे।

प्रत्येक दुःख और विपत्ति का इलाज किया जा सकता है और वह दूर हो सकती है, इस लिए वह सदैव कहीं नहीं रहने पाती। दुःख की जड़ अजानता है, अर्थात संसार के पदार्थों को और उनके सम्बंध को भली भांति न समझना ही मूर्खता है। जब तक हम में इस प्रकार की अजानता रहती है, तब तक हम विपत्ति के दास बने रहते हैं। दुनिया में जितना दुःख और क्लेश होता है सब अज्ञानता के कारण होता है। यदि मनुष्य दुःख और विपत्ति से शिक्षा ग्रहण करे तो कुछ ज्ञान प्राप्त हो सकता है और विपत्ति भी स्वयमेव दूर हो सकती है, परंतु प्रायः लोग विपत्ति से शिक्षा ग्रहण नहीं करते, इसी लिए विपत्ति उनका पीछा नहीं छोड़ती और वे उसमें ग्रसित रहते हैं। हमें एक बच्चे का हाल मालूम है कि रात्रि के समय जब उसकी माँ उसे सोने के लिए ले जाती थी, तो वह चिराग (दीपक) के साथ खेलने के लिए बड़ा रोता और चिल्लाता था। एक रात्रि को जब उसकी मां थोड़ी देर के लिए उसे अकेला छोड़ कर बाहर चली गई, तो उसने अज्ञानता के कारण दीपक की लौ को पकड़ लिया। परिणाम वही हुआ जो होना था, अर्थात उसका हाथ जल गया, परंतु उस दिन से फिर कभी बच्चे ने दीपक से खेलने की इच्छा नहीं की। उसने अपनी ही अज्ञानता से आज्ञा-पालन का पाठ सीख लिया और उसे यह भी ज्ञान होगया कि आग का गुण जलाने का है। इसी एक घटना से संपूर्ण दुःख और विपत्तियों का गुण, स्वभाव, ज्ञान और अंतिम परिणाम मालूम हो जाता है। जिस प्रकार बच्चे ने अग्नि के गुण की अन-

भिज्ञता के कारण दुःख उठाया, उसी प्रकार बड़ी अवस्थावाले बच्चे इस कारण से दुःख उठाते है कि जिन वस्तुओं के लिये वे रोते है और जिनको लेने का वे उद्योग करते है, उनके गुण और स्वभाव से वे अपरिचित है और इसी लिए जब वे वस्तुएँ उन्हें मिल जाती हैं, तो हानि उठाते हैं। अन्तर केवल इतना है कि बड़ी अवस्था के बच्चों में दुःख और अज्ञानता बहुत जड़ पकड लेती है और छिपी रहती है।

दुःख को सदैव अंधकार से और सुख को प्रकाश से समानता की जाती है और इस समानता में गुप्त रहस्य है। असल बात यह है कि जिस प्रकार प्रकाश संपूर्ण जगत में फैल जाता है और अन्धकार एक छोटासा बिंदु है या किसी छोटेसे पदार्थ की परिछांई है कि जो अनंत प्रकाश की कुछ किरणों को रोक देता है, उसी प्रकार उत्कृष्ट सुख का प्रकाश एक निश्चित और जीवनप्रद शक्ति है जो विराट संसार मे फैल जाती है और दुःख अपनी ही तुच्छ परिछांई है जो प्रकाश की किरणों को भीतर प्रवेश नही करने देती। जब रात्रि होती है, संपूर्ण संसार अन्धकारमय होजाता है। चाहे अन्धकार कितना ही गहरा क्यों न हो परंतु वह पृथ्वी के एक थोड़े से अंश को ही ढकता है, शेष सर्वत्र प्रकाश ही प्रकाश रहता है और यह भी सबको ज्ञात रहता है कि प्रातःकाल प्रकाश हो जायगा। अतएव पाठकगण स्मरण रक्खो कि जब दुःख, शोक और विपत्ति की अँधियारी रात्रि तुम्हारी आत्मा को ढक लेती है और तुम थके मादे अनिश्चित मार्ग मे ठोकरें खाते फिरते हो, तब तुम अपनी ही निज इच्छाओं को अपने और हर्ष और आनन्द के अपरिमित प्रकाश

के बीच में डालते हो और वह काली परिछांई जो तुम्हें ढक लेती है, वह तुम्हारी ही परिछांई है अन्य किसी की नहीं है। जिस प्रकार बाह्य अन्धकार कोई वास्तविक पदार्थ नहीं है, न वह कहीं से आता है और न कहीं को जाता है और न उसका कोई स्थाई स्थान है, उसी प्रकार आन्तरिक अन्धकार कोई वास्तविक पदार्थ नहीं है। स्वयं प्रकाशमान आत्मा पर से वह योंही गुजर जाता है।

संभव है कि कुछ मनुष्य यह कह उठें कि फिर तुम विपत्ति की अंधियारी में से गुजरते ही क्यों हो? इसका उत्तर यह है कि अज्ञानता के कारण तुमने स्वयं ऐसा करना पसंद किया है और ऐसा करने से तुम्हें सुख और दुःख दोनों का अच्छी तरह से ज्ञान हो जायगा और दुःख में पड़ने के कारण फिर तुम सुख को अधिक पसंद करने लगोगे। दुःख अज्ञानता के कारण होता है, इसलिए जब तुम उसको अच्छी तरह से सीख और समझ लोगे, तब अज्ञानता स्वयमेव दूर हो जायगी और ज्ञान का प्रकाश उसके स्थान में हो जायगा। परन्तु जिस प्रकार एक हठी और अवज्ञाकारी विद्यार्थी अपने स्कूल के पाठ को याद नहीं करता है, उसी प्रकार यह भी सम्भव है कि तुम अनुभव से शिक्षा ग्रहण न करो और सदैव अन्धकार में पड़े रहो और रोग, शोक और निराशा के रूप में निरंतर दण्ड भोगते रहो। अतएव जो लोग अपने को विपत्ति से मुक्त करना चाहते हैं उन्हें उचित है कि वे पाठ सीखने शिक्षा ग्रहण करने के लिए सदैव तैयार रहें और उस रीति का अनुसरण करें जिससे ज्ञान, सुख और शांति की प्राप्ति हो।

सुख की प्राप्ति का मार्ग।

जिस तरह कोई आदमी अपने को किसी अँधेरी कोठरी में बंद कर ले और यह कहने लगे कि रोशनी है ही नहीं, उसी तरह सम्भव है कि तुम सच्चाई की रोशनी को अपने भीतर आने ही न दो। परंतु इस के विपरीत जिस प्रकार अँधेरी कोठरी में बंद हुआ मनुष्य भी बाहर की रोशनी से इन्कार नहीं करता, उसी प्रकार संभव है कि तुमने जो अपने आस पास मोह, माया, स्वार्थ, अज्ञान और पक्षपात की दीवार बना रक्खी है, उसे तुम ढाना शुरू कर दो और ज्ञान के सर्वव्यापी प्रकाश को भीतर आने दो।

अपने आत्मानुभव से इस बात के समझने की कोशिश करो और उसको केवल काल्पनिक न समझ कर वास्तविक समझो कि विपत्ति थोड़े दिनों के लिए आती है और वह तुम्हारी ही पैदा की हुई है, तथा तुम पर जितने दुःख और कष्ट आये हैं, वे सब एक अटल और विश्वव्यापी नियम के अनुसार आए हैं। तुम उनके योग्य हो और तुम्हें उनकी आवश्यकता है, कारण कि उनके सहन करने से और उनको अच्छी तरह समझ लेने से तुम अधिक बलवान, ज्ञानी और सभ्य बन जाओगे। जब तुम्हें भली भांति ज्ञान हो जायगा, तब तुम स्वयं अपनी दशा को सुधार सकते हो, दुःखों को सुखों में परिणत कर सकते हो और अपने जीवन के लिए आवश्यक सामग्री संग्रह कर सकते हो।

२. दुनिया मानसिक अवस्थाओं का परिणाम है।

से तुम हो, वैसे ही तुम्हारी दुनिया है। तुम दुनिया की प्रत्येक वस्तु को अपने ही आभ्यन्तरिक अनुभव के अनुसार समझते हो। बाह्य में चाहे कुछ भी हो, उसकी कोई परवा नहीं, कारण कि जो कुछ भी बाह्य में है, वह सब तुम्हारे आंतरिक ज्ञान की अवस्था का प्रतिरूप है। तुम्हारी आंतरिक अवस्था पर ही सब कुछ निर्भर है, कारण कि जो कुछ अंतरंग में होता है, वही बाह्य में शीशे की भांति झलकने लगता है।

जो कुछ तुम्हें निश्चित रूप से ज्ञात है वह सब तुम्हारा जातीय अनुभव है और जो कुछ भी तुम्हें भविष्य में ज्ञात होगा वह तुम्हारे अनुभव में आयगा और तुम्हारा एक भाग बन जायगा।

तुम्हारे ही विचार, तुम्हारी इच्छाएं और उच्च आकांक्षाएं तुम्हारी दुनिया है और जो कुछ इस दुनिया में हर्ष आनन्द और सुन्दरता अथवा दुःख, शोक और कुरूपता देखते हो, वह सब तुम्हारे ही मनोगत विचारों का परिणाम है। तुम अपने ही विचारों से अपने जीवन और जगत को बनाते और बिगाड़ते

हो। जैसे तुम्हारे मन में विचार होंगे, वैसा ही तुम्हारा जीवन होगा और वैसी ही तुम्हारी वाह्य अवस्था होगी। जो कुछ भी तुम्हारे हृदय मंदिर में है, वह कभी न कभी अवश्य ही तुम्हारे वाह्य-जीवन में आ जाएगा और तुम्हारा संपूर्ण कार्य्य व्यवहार उसी के अनुसार होगा। जो आत्मा नीच, अपवित्र और स्वार्थी है, वह यथार्थ में दुःख और शोक की ओर जारही है और जो आत्मा उच्च, पवित्र और निःस्वार्थ है वह निश्चित रूप से हर्ष और आनंद की ओर बढ़ी जारही है। प्रत्येक आत्मा उसी वस्तु को अपनी ओर आकर्षित करती है, जो उसकी होती है। अन्य कोई वस्तु उसके पास नहीं आ सकती। इस बात को जानने और अनुभव करने के लिये ईश्वरीय नियम की सर्व व्यापकता को मानना पड़ता है। जैसे मनुष्य के मानसिक विचार होते हैं उन्हीं के अनुसार उसके जीवन की घटनाएं होती हैं जो उसके जीवन को बनाती और बिगाड़ती है। प्रत्येक आत्मा में भिन्न भिन्न प्रकार के अनेक विचार और अनुभव भरे होते हैं और शरीर उनके प्रकाश करने का प्रत्यक्ष साधन होता है। अतएव जैसे तुम्हारे विचार हैं, यथार्थ में वैसे ही तुम स्वयं हो। तुम्हारे चहुँ ओर जो जड़ चेतन संसार फैला हुआ है, वह सब तुम्हारे विचारों के रंग में रँग जाता है अर्थात् तुम्हारे विचारों के अनुकूल ही रूप धारण कर लेता है। महात्मा बुद्ध का कथन है कि जो कुछ हम हैं, वह सब हमारे ही विचारों का परिणाम है। हमारा जीवन हमारे ही विचारों पर स्थित है और हमारे ही विचारों से बना हुआ है। इससे यह नतीजा निकलता है कि यदि कोई मनुष्य सुखी और प्रसन्न है, तो उसका यह कारण है कि वह अच्छे प्रसन्नता के विचारों में मग्न रहता है और यदि

कोई मनुष्य दुःखी है तो उसका कारण यह है कि वह दुःख निराशा और निर्बलता के विचारों में तन्मय रहता है। चाहे कोई मनुष्य भयभीत हो या निर्भय, चाहे मूर्ख हो या बुद्धिमान चाहे दुःखी हो या सुखी, उसकी प्रत्येक अवस्था का कारण उसकी आत्मा में ही विद्यमान है, बाहर कहीं नहीं है। परंतु यहाँ पर प्रायः लोग यह शंका करेंगे, कि क्या बाह्य अवस्थाओं का हमारे मन और स्वभाव पर कुछ भी असर नहीं पड़ता? इसका उत्तर यह है कि बाह्यअवस्थाएं तुम पर केवल उतना ही प्रभाव डाल सकती हैं, जितना कि तुम चाहो, अधिक नहीं और इसमें तनिक भी असत्य नहीं है। बाह्य घटनाएं इस कारण तुम पर अपना अधिकार जमा लेती हैं कि तुम्हें विचार-शक्ति का ठीक ठीक ज्ञान नहीं है और न तुम उसके उपयोग से ही परिचित हो। तुम्हें विश्वास है और इसी छोटे से शब्द विश्वास पर तुम्हारा सारा सुख दुःख निर्भर है, कि बाह्य अवस्थाओं में तुम्हारे जीवन को बनाने और बिगाड़ने की शक्ति है इसी विश्वास के कारण तुम बाहर वस्तुओं के आधीन हो जाते हो, अपने को उनका अनन्य दास समझ लेते हो और उनको अपना सर्वाधिकार सम्पन्न स्वामी। इसी कारण तुम उनको वह शक्ति देते हो, जो उनमें स्वयं नहीं है और यथार्थ में तुम केवल घटनाओं के ही वश में नहीं हो जाते, किंतु उनके कारण दुःख, सुख, भय, आशा सबलता, निर्बलता का भी अनुभव करने लगते हो और ये संपूर्ण भाव तुम्हारे ही विचारों ने घटनाओं में उत्पन्न कर दिये हैं।

मैं ऐसे दो आदमियों को जानता हूं कि जिनकी वर्षों के श्रम से कमाई हुई संपत्ति उन की जवानी में ही जाती रही थी

उनमें से एक को तो बडी गहरी चोट लगी और वह अत्यन्त दुःखी और निराश हो गया परतु दूसरे आदमी ने जब अखबार मे यह देखा कि वह बैंक जिसमे उसका रुपया जमा था फेल हो गया है और अब उससे एक पैसा भी वसूल नही हो सकता है, तो वह बड़ी शांति और धैर्य के साथ कहने लगा कि - 'गया सो गया' अब उसके लिये दुःख, और शोक करना व्यर्थ है। ऐसा करने से रुपया नही मिल सकता। रुपया केवल कठिन परिश्रम से ही मिलेगा, अतएव वह नये जोश के साथ फिर बडे श्रम से काम करने लगा और थोडे ही दिनो मे वह ऐश्वर्यवान हो गया। पहला आदमी धन की हानि पर केवल दुःख और शोक मनाता रहा और अपने भाग्य को दोष देता रहा। इसी कारण वह अपनी बुरी दशाओ का दास बना रहा। अतएव धन-हानि के कारण एक मनुष्य को तो दुःख हुआ कारण कि उसके मन मे नाना प्रकार के कुत्सित विचार उत्पन्न हुए, परतु दूसरे को सुख और लाभ हुआ। उसके कारण उसके मन मे नवीन शक्ति और आशा का सचार हुआ और उसने बड़े श्रम और उत्साह से काम किया।

यदि घटनाओ मे हानि व लाभ पहुंचाने की शक्ति होती तो उनसे समस्त मनुष्यो क समान लाभ व हानि पहुचती। परतु जब एक ही घटना से एक आदमी को तो लाभ और दूसरे को हानि पहुचती है तो इससे सिद्ध होता है कि हानि वा लाभ उस घटना मे नही है, किंतु जिस मनुष्य को उस घटना का सामना करना पड़ता है, उसके मन में है। जब तुम इस बात को अच्छी तरह समझने लगोगे, तो तुम अपने विचारों पर

कर उत्तर दिया, कि हां मैं जानता हूं इस पानी में मेंढक के छोटे २ बच्चे हैं, जिनका पकडना बहुत आसान है।

देखिये, जहां पदार्थ-विज्ञानी ने जिसका मस्तक प्राकृतिक वस्तुओं के ज्ञान से भरा हुआ था, वैभव और सौंदर्य का अनुभव किया, वहां दूसरे मनुष्य ने जिसके मस्तक मे इस भांति की शिक्षा ने प्रवेश नही किया था, कीचड के मेंढक के सिवाय और कुछ नहीं देखा।

जंगली फूल जिसको एक चलता हुआ राहगीर बे सोचे समझे अपने पैरों तले रौंद डालता है, कवि के आध्यात्मिक चक्षु के लिये वही देवदूत के सदृश है जो ईश्वर की ओर से इस संसार मे प्रगट हुआ है। समुद्र को बहुत से लोग पानी का एक विशाल और भयंकर विस्तार समझते है जिसपर बहुत से जहाज़ चलते है, और कभी २ नष्ट भी हो जाते है; परन्तु किसी गंधर्व से पूछो, उसके लिये वही समुद्र एक जीती जागती वस्तु है और उसकी लहरों मे उसे ईश्वरीय गुणों के ताल और स्वर सुनाई पडते है। जहां पर एक साधारणमनुष्य को गडबडी और परेशानी नजर आती है, वही पर एक तत्वज्ञानी को कार्य कारण का अविनाभावी सम्बन्ध दिखाई देता है और जहां पर नास्तिक और जडवादी को अनन्त मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ दिखलाई नहीं देता, वहां पर ईश्वरवादी को चलती फिरती और अजर-अमर आत्मा दिखलाई देती है अर्थात ईश्वर के अस्तित्व का बोध होता है। जिस प्रकार हम घटनाओं और पदार्थों को अपने विचारों से वेष्टित करते है, उसी प्रकार हम दूसरो की आत्माओं को भी अपने विचारो के रूप में परिवर्तित

करते हैं। अर्थात जैसे हम स्वयं हैं दूसरों को भी वैसा ही समझते हैं। जो मनुष्य अविश्वासी होता है, वह संसार भर को अविश्वासी समझता है। झूठा आदमी यह समझ कर अपने जी को बहलाता है कि संसार में एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है कि जो बिल्कुल सच बोलता हो। ईर्ष्या और डाह रखने वाले मनुष्य सब को अपने समान समझते हैं। कृपण मनुष्य को सदा इस बात का भय लगा रहता है कि कहीं लोग मेरे माल को न छीन लें। जिस आदमी ने रुपया कमाने में अपने ईमान को बेच दिया है वह सदा अपने तकिये के नीचे तमञ्चा रखकर सोता है और इस धोके में पड़ा रहता है कि इस दुनिया में बेईमान आदमी भरे हुये हैं जो उसके धन को उससे जबरदस्ती छीनना चाहते हैं और जो मनुष्य विषय-वासनाओं में लिप्त रहते हैं वे साधु महात्माओं को भी ढोंगी और मक्कार समझते हैं। इसके विपरीत जिनके विचार उदार, पवित्र और प्रेमयुक्त हैं, वे दूसरों के साथ प्रेम और सहानुभूति रखना अपना धर्म समझते हैं। सच्चे और ईमानदार आदमियों को कभी शङ्का या सङ्कोच से दुःख नहीं होता। उदारचित मनुष्य दूसरे की बढ़ती देख कर प्रसन्न होते हैं और वे जानते भी नहीं कि ईर्ष्या या डाह किसे कहते हैं। जिन लोगों ने अपनी आत्मा में परमात्मा का अनुभव कर लिया है, वे प्राणी मात्र में ईश्वर-दर्शन करते हैं।

समस्त स्त्री पुरुषों को अपने मानसिक विचारों की सत्यता इस बात से पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाती है कि कार्य कारण के नियमानुसार वे उन्हीं विचारों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, जिन्हें वे अपने भीतर से निकालते हैं और इस लिए वे

अपने ही जैसे विचार वालो से मेल जोल रखते है । फारसी मे एक कहावत है " कुनद हमजिन्स वा हमजिन्स परवाज–कबूतर वा कबूतर बाज वा बाज " अर्थात एक प्रकार के पक्षी एक साथ उडते हैं और एक स्थान पर बठते है। यह कहावत वडे महत्व की है। कारण कि स्थूल जगत् के समान मानसिक जगत मे भी प्रत्येक विचार अपने समान विचार से सम्बन्ध रखता है। यदि तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारे साथ दया का व्यवहार करे, तो तुम भी उनके साथ दया का व्यवहार करो। यदि तुम चाहते हो कि दूसरे लोग तुम्हारे साथ सच्चाई का व्यवहार करे, तो पहले तुम स्वयं सच बोलो जो कुछ तुम दोगे, वही तुमको मिलेगा, कारण कि यह संसार तुम्हारे विचारों का प्रतिविम्ब है। कहने का सारांश यह है कि तुम दूसरो के साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे साथ करें।

यदि तुम इस बात के लिये प्रार्थना करते हो और यह अभिलाषा रखते हो कि मरने के पश्चात् तुम्हे स्वर्ग मिले, तो लो यह तुम्हारे लिये हर्ष समाचार है कि तुम स्वर्ग मे प्रवेश कर सकते हो और अभी अपने हृदय मे उसका अनुभव कर सकते हो। जिस स्वर्ग की तुम इच्छा करते हो, वह सारे संसार में फैला हुआ है और तुम्हारे भीतर भी मौजूद है। देर केवल इस बात की है कि तुम उसे ढूडो, स्वीकार करो और उस पर अपना अधिकार जमा लो। एक अनुभवी विद्वान ने क्या ही अच्छा कहा है, कि जब लोग तुमसे यह कहे कि यह देखो, वह देखो, तो तुम उनके पीछे पीछे मत दौडो। ईश्वरीय राज्य

तुम्हारे ही भीतर मौजूद है। अन्यत्र कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारा कर्त्तव्य यह है कि तुम इस बात पर विश्वास करो और विश्वास भी सच्चे दिल से करो कि जिस से तुम्हारे हृदय से सर्व प्रकार की शंकाएँ दूर हो जाँय और फिर तुम पुनः पुनः विचार करो, यहां तक कि तुम उसे अच्छी तरह समझ जाओ। बस फिर तुम अपने आन्तरिक जगत् को बनाने और उसे पवित्र रखने का उद्योग करोगे और ज्यों ज्यों तुम्हारा ईश्वरीय ज्ञान बढ़ता जायगा, त्यों त्यों तुम्हें यह ज्ञात होता जायगा कि बाह्य पदार्थों में कुछ भी शक्ति नहीं है। यह आत्मा ही है कि जिसमें जादू ऐसी शक्ति विद्यमान है, इसके बाहर कुछ नहीं है।

३. अप्रिय अवस्थाओं से निकलने का मार्ग।

ह हम पहले पढ चुके हैं और अच्छी तरह समझ चुके है कि दुःख या विपत्ति एक परछांई है और स्थायी सुख की सुन्दर आकृति पर स्वार्थ के बीच में आ-जाने से पड़ जाती है और यह ससार एक दर्पण के सदृश है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति केवल अपनी ही परछांई देखता है। अब हम धीरे धीरे धैर्य और दृढ़ता के साथ उस स्थान पर पहुँचते है, जहां पर ईश्वरीय नियम को अच्छी तरह से देखा और समझा जा सकता है। ईश्वरीय नियम के ज्ञान से हमें इस बात का भी ज्ञान हो जायगा कि प्रत्येक वस्तु कार्य कारण के अविनाभावी सम्बन्ध मे जकड़ी हुई है और किसी भी वस्तु का उस नियम से पृथक होना संभव नही है। मनुष्य के छोटे से छोटे काम से लेकर देवताओं के बडे बडे कार्यों तक मे यह नियम अनवरित रूप से कार्य कर रहा है। कोई भी अवस्था ऐसी नही हो सकती जिसमें एक नियम का कार्य एक क्षण भर के लिये भी रुक सके। ऐसा होना सर्वथा असम्भव है, कारण कि ऐसा होने से नियम का ही अभाव हो जायगा। अतएव, जीवन की प्रत्येक अवस्था नियमवद्ध है और प्रत्येक अवस्था का कारण और भेद उसी में विद्यमान है। यह

नियम कि 'जैसा मनुष्य बोता है वैसा काटता है' सृष्टि के द्वार पर सुनहरे और चमकीले अक्षरों में खुदा हुआ है। न कोई इससे इनकार कर सकता है, न कोई इसका विरोध कर सकता है और न कोई इससे बच सकता है। जो आदमी अपना हाथ आग में डालता है, वह उस समय तक जलने की तकलीफ उठाता रहेगा जब तक कि वह अपने हाथ को आग में से बाहर न निकाल ले। दुआ और प्रार्थनाओं से उसकी अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। ठीक यही नियम मानसिक जगत में काम कर रहा है। राग, द्वेष, काम क्रोध, लोभ, मोह, माया ये सब भिन्न भिन्न प्रकार की अग्नि हैं जो निरन्तर जलती रहती है और जो कोई इन्हें छुएगा वह अवश्य जलेगा। मन की इन सम्पूर्ण अवस्थाओं का नाम दुःख है और वास्तव में यह नाम यथार्थ और सार्थक है, कारण कि अज्ञानवश इनसे आत्मा ईश्वरीय नियम को बदलना चाहती है। यह मनुष्य के भीतर गड़बड़ पैदा कर देती है और कभी न कभी बाह्य में रोग, शोक, दुख, निराशा, असफलता और दुर्भाग्य के रुप में प्रकट होती है। इसके विपरीत प्रेम, प्रीति, सत्यता और पवित्रता शीतल वायु है जिससे आत्मा को शांति मिलती है और चूंकि ये ईश्वरीय नियम के अनुकूल हैं, इस कारण सुख, स्वास्थ्य, सफलता, आशा और सौभाग्य के रुप में प्रकट होती है।

इस विश्वव्यापी नियम के भली भांति समझने से, उस मानसिक अवस्था की प्राप्ति होती है जिसका नाम आज्ञा-पालन है। जब हम यह जान लेंगे कि संसार में प्रेम, न्याय और ऐक्य इस नियम पर स्थित हैं तब हमें यह भी मालूम हो जायगा कि

जितनी विपरीत और दुःखदायक अवस्थाएँ हैं, वे सब हमारे नियम भंग करने के परिणाम हैं। ऐसे ज्ञान से शक्ति और बल बढ़ता है और ऐसे ही ज्ञान से उत्तम जीवन, स्थाई सफ़लता और आनन्द की प्राप्ति होती है। जो मनुष्य प्रत्येक दशा में संतोष करता है, और सम्पूर्ण अवस्थाओं को अपनी शिक्षा के अवश्यकीय अंग समझता है, वह सब प्रकार की दुखदायी अवस्थाओं पर विजय प्राप्त करता है और उन्हें इस प्रकार अपने आधीन कर लेता है कि फिर उनके आने की कोई भी आशंका नहीं रहती, कारण कि नियम-बद्ध कार्य करने से उसका सर्वनाश हो जाता है ऐसा मनुष्य ही नियम-बद्ध काम करता है। उसने यथार्थ में नियम को अच्छी तरह से समझ लिया है और अपने को नियम रूप बना लिया है। जिस वस्तु पर वह अधिकार प्राप्त करता है उस पर सदैव के लिये प्राप्त करता है और जो इमारत बनाता है वह ऐसी बनाता है कि उसका फिर कभी विनाश नही हो सकता।

जिस प्रकार दृढता और निर्बलता का कारण हममें विद्यमान है, उसी प्रकार सम्पूर्ण सुख और दुःखों का कारण भी हम में विद्यमान है। जब तक हम अपने अंतरंग को शुद्ध न कर लेंगे तब तक किसी प्रकार की उन्नति नही हो सकती और जब तक नियमित रूप से ज्ञान की वृद्धि न की जायगी, तबतक सुख या शांति का मिलना नितांत असम्भव है।

तुम कहते हो कि हम अपनी हालत से मजबूर है। तुम चाहते हो कि तुम्हें अच्छे अवसर मिलें, तुम्हारा कार्य-क्षेत्र बड़ा हो जाए, तुम्हारी शारीरिक अवस्था अच्छी हो जाए, और शायद तुम अपने मन मे अपने भाग्य को भी उलाहना देते होगे

जिसने तुम्हारे हाथ पाँव बाँध रक्खे हैं। जो कुछ भी मैं कहता हूँ वह तुम्हारे लिये ही है। तुम उसको ध्यान से सुनो और मेरे शब्दों को अपने हृदयपटल पर अंकित करलो, कारण कि जो कुछ भी मैं तुमसे कहूंगा, वह अक्षर अक्षर सत्य होगा। "यदि तुम दृढ़प्रतिज्ञ होकर अपने आंतरिक जीवन को उन्नत बना लोगे तो तुम्हारी बाह्य अवस्था में भी तुम्हारी इच्छानुसार अवश्य उन्नति हो जायगी।" मैं अच्छी तरह से जानता हूं कि पहले पहल यह मार्ग तुम्हें कंकरीला और उजड़ मालूम होगा, क्योंकि सच्चाई सदा ऐसी ही दिखलाई देती है। यह केवल मोह माया ही है जो चमकीली और भड़कीली होती है। परंतु यदि तुम उसी मार्ग पर चलने की दृढ़प्रतिज्ञा करलो, धैर्य और दृढ़ता के साथ अपने मन को क्रमपूर्वक कार्य करना सिखलाओ, अपनी त्रुटियों को समूल नाश करदो, और अपने बल और आंतरिक शक्तियों का विकाश होने दो, तो तुम्हारे बाह्य जीवन में जो परिवर्तन होंगे, उनको देख कर तुम्हें बड़ा आश्चर्य होगा।

जब तुम इस प्रकार कार्य करना प्रारंभ कर दोगे, तो तुम्हें बहुत से सुअवसर मिलेंगे और उन सुअवसरों से समुचित लाभ उठाने की शक्ति और ज्ञान तुम में उत्पन्न हो जायगा। सच्चे सुहृद बिना बुलाये तुम्हारे पास आजायेंगे। तुम से प्रेम सहानुभूति रखनेवाले मनुष्य तुम्हारे पास उसी प्रकार खिंचे चले आयेंगे, जिस प्रकार चुम्बक पत्थर सुई को खींच लेता है और पुस्तकों तथा अन्य बाह्य वस्तुओं की जितनी तुम्हें आवश्यकता होगी, वे सुगमता से तुम्हें मिल जायँगी।

शायद निर्धनता का बंधन तुम्हे दुःखदाई ज्ञात पड़ता हो तुम असहाय और निराश्रित हो और तुम्हारी हार्दिक इच्छा यह हो कि किसी प्रकार तुम्हारा बोझ हल्का होजाय, परन्तु यह बोझ तनिक भी हल्का नही होता और तुम दिन २ विपत्ति और अन्धकार में ग्रसित होते जाते हो । शायद तुम अपने भाग्य को उलाहना देते हो । अपने जन्म, अपने कुल, अपने माता पिता अपने स्वामी को दोष देते हो कि उन्होने व्यर्थ में तुम्हे विपत्ति और निर्धनता मे डाल दिया और दूसरों को सुख और ऐश्वर्य प्राप्त है। तुम्हारा इस प्रकार दोष देना और शिकायत करना व्यर्थ है । इससे कोई लाभ नही । इस प्रकार की शिकायत करना बिल्कुल छोड़ दो क्योंकि जिन चीजों को तुम दोष देते हो, उनमे से कोई भी तुम्हारी निर्धनता का कारण नही है। तुम्हारी निर्धनता का कारण स्वय तुम्हारे ही भीतर विद्यमान है और जहा कारण है, वहां इसकी औषधि भी है। तुम्हारा शिकायत करना ही इस बात को प्रकट करता है कि तुम ऐसी ही हालत में रहने योग्य हो, और इससे यह भी पता लगता है कि तुम मे श्रद्धा और विश्वास की कमी है, जो उन्नति और उद्योग का मूल साधन है। जिस जगत की प्रत्येक वस्तु नियमानुसार है, उसमें कोई भी दोष नही लगा सकता। यदि कोई मनुष्य स्वतः अपने को दुःख और चिंता में डालता है और व्यर्थ मे चिड़चिड़ाता रहता है, तो मानो वह स्वयं आत्मघात करता है । तुम अपनी मानसिक अवस्था के कारण अपनी बेड़ियो को मज़बूत करते हो और अज्ञान और अंधकार में फँस रहे हो । तुम अपने जीवन के मार्ग को बदल डालो । तुम्हारा बाह्यजीवन भी स्वयमेव बदल जायगा । अपने में ज्ञान और विश्वास पैदा करो और अपने को उत्तम अवसरो और

उत्कृष्ट वस्तुओं के योग्य बनाओ। सब से पहले इस बात का ख़्याल रक्खो कि जो कुछ तुम्हारे पास है उसको अच्छी तरह से उपयोग में लाओ और इस धोके में मत आओ कि तुम छोटे छोटे लाभों या कार्यों का विचार न करके बड़े २ कार्यों को कर सकते हो कारण कि यदि तुम ऐसा करोगे, अर्थात् छोटे २ कार्यों की परवाह न करके बड़े बड़े कार्यों पर हाथ फैलाओगे तो तुम्हें कोई स्थायी लाभ न होगा और संभव है कि तुम अपने स्थानसे फिर पीछे हट जाओ इस लिए कि तुम्हें शिक्षा मिले। जिस प्रकार बालक स्कूल में पहली शिक्षा को पास किये बिना दूसरी कक्षा में नहीं चलाया जा सकता, उसी प्रकार तुम्हें उचित है कि पहले जो कुछ तुम्हारे पास है, उसे अच्छी तरह से उपयोग में लाओ, उससे यथेष्ट लाभ उठाओ तब तुम्हें अधिक लाभ की प्राप्ति होगी। देखो एक मालिकने अपने एक नौकर को ५) रु० दिये दूसरे को २) रु० और तीसरे को १) रु०। इनमें से पहिले और दूसरे नौकर ने तो मिहनत करके दुगने रुपये कर लिये परन्तु तीसरे ने अपने रुपये को ज़मीन में गाड़ दिया और उससे कुछ भी लाभ नहीं उठाया। मालिक को जब इस बात का पता लगा, तो वह उस पर बड़ा नाराज़ हुआ और उसने वह रुपया भी उससे छीन कर पहले नौकर को दे दिया। इस उदाहरण से स्पष्ट प्रगट है कि जो कुछ हमारे पास है चाहे वह कितना ही थोड़ा क्यों न हो, उससे हमें लाभ उठाना चाहिये और यथा समय अच्छे काम में लगाना चाहिये। यदि हम ऐसा न करेंगे तो इसका यह परिणाम होगा कि जो कुछ हमारे पास है, वह भी जाता रहेगा, कारण कि हम अपने ही व्यवहार से इस बात को सिद्ध कर रहे हैं कि हम उसके सर्वदा अयोग्य हैं। अतएव

मनुष्य को उचित है कि जो कुछ उसके पास है, जैसी उसकी अवस्था है, उसी पर सतोष करे और उससे क्रमशः उन्नति करे। तुम एक छोटी झोपड़ी में रहते हो, और तुम्हारे चहुँ ओर ऐसे कारण विद्यमान हैं कि जो तुम्हारे स्वास्थ्य के लिये हानि-कर है। इस अवस्था मे यदि तुम्हें अच्छे और वडे मकान की इच्छा है, तो तुम्हें चाहिये कि तुम अपनी झोंपड़ी ही को एक छोटा सा स्वर्ग का नमूना वनाकर दिखलाओ। उसे ऐसा साफ़ और सुथरा रक्खो कि उसमें नाममात्र को भी कहीं कोई धव्वा न रहे। तुमसे जहा तक हो सके उसे सुन्दर और रमणीक बनाओ। जिस काम को करो और जिस चीज़ को धरो उठाओ, वड़ी सावधानी से करो। भोजनशाला को स्वच्छ और सुन्दर रक्खो। चाहे तुम्हारे यहां हलवा पूड़ी न वन कर सूखी रोटी और चने का शाक ही बनता हो, परंतु उसे अत्यन्त स्वादिष्ट वनाओ। यदि तुम्हे अपने झोंपड़ेमें कालीन या फर्श विछाने की शक्ति नहीं है तो न सही, अपने कमरे में हर्ष, आनन्द और स्वागत के फ़र्श विछाओ और उनको प्रेमयुक्त शब्दों की कीलों से जड़ कर संतोष और दृढता के हथौडे से ठोक दो। अर्थात् उसी झोंपड़ी में सव मिल कर हर्ष और आनन्द के साथ जीवन व्यतीत करो। परस्पर मे प्रेम और प्रीति का व्यवहार करो और धैर्य और संतोष को धारण करो। ऐसा फ़र्श न तो धूप से ख़राब होगा और न कभी काम में आने नें घिसेगा।

इस प्रकार अपनी आस पास की चीज़ों की क़दर करने से तुम उससे अच्छे होजाओगे और फिर तुम्हें उनकी आवश्यकता नहीं होगी, तथा सुअवसर के मिलने पर तुम्हें अच्छा घर और

अच्छी वस्तुएं मिल जायेंगी, जो मानो तुम्हारी बाट जोह रही हैं और जिनके योग्य तुमने अपने आप को बना लिया है।

यदि तुम यह चाहते हो कि तुम्हें सोचने और काम करने के लिये अधिक समय मिले और यह समझते हो कि तुम्हें बहुत देर तक सख्त काम करना पड़ता है, तो तुम्हे इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जो कुछ थोड़ा सा समय तुम्हें मिलता है, उससे तुम पूरा पूरा लाभ उठाते हो या नहीं? यदि तुम उस थोड़े से समय को भी नष्ट कर देते हो, तो तुम्हारे लिये अधिक की इच्छा करना व्यर्थ है, कारण कि तुम उससे भी अधिक आलसी और असावधान हो जाओगे।

अतएव निर्धनता और समय और अवकाश का न मिलना जिनको तुम आपत्तियां समझते हो, वे आपत्तिया नहीं हैं और यदि वे तुम्हारी उन्नति में बाधक होती हैं, तो यह तुम्हारा ही दोष है। तुमने अपनी ही कमजोरियों के कारण उनको ऐसा बना दिया है। जो दोष तुम उनमें पाते हो. वह यथार्थ में तुम्हीं में हैं। इस बात को भली भांति समझ लो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो। जिस प्रकार के ढांचे में तुम अपने मन को ढालोगे, वैसा ही तुम्हारा भाग्य बनेगा और ज्यों ज्यों तुम इस बात को समझते और अनुभव करते जाओगे, त्यों त्यों तुम्हारे दुख सुख रूप होते जायंगे अर्थात जिन्हें तुम दुःख और विपत्ति के कारण समझ रहे हो. वे सुख और आनन्द के कारण हो जायेंगे उस समय तुम्हें अपनी निर्धनता से आशा, साहस और संतोष की प्राप्ति होगी और समयाभाव के कारण तुम में काम करने की तेजी और अवसर को हाथ से न देने की बुद्धि आ जायगी।

जिस प्रकार मैली से मैली जमीन में सुन्दर और सुगन्धित पुष्प पैदा होते हैं, उसी प्रकार निर्धनता की अन्धकारमय भूमि में दयालुता के अनुपम और मनोहर पुष्प बढ़ते और खिलते हैं। जहां पर आपत्तियों का सामना करना पड़ता है और अप्रिय अवस्थाओं को विजय करना होता है, वहीं पर भलाई और नेकी प्रकट होती है और अपने गुण दिखलाती है।

सम्भव है कि तुम किसी दुष्ट और निर्दई मालिक के नौकर हो। वह तुम से असद्व्यवहार करता है, परन्तु तुम इस बात को भी अपनी शिक्षा के लिये आवश्यक समझो। मालिक तुम से असह्य व्यवहार करता है, परन्तु तुम उसके साथ सभ्यता से व्यवहार करो। सदा संतोष और इन्द्रिय निग्रह का अभ्यास करो। जो हानि तुम्हे पहुँची है, उससे यह लाभ उठाओ कि अपने में मानसिक और आत्मिक शक्ति प्राप्त करो। इस प्रकार चुपके २ तुम अपने मालिक के लिये एक आदर्श बन जाओगे और उसपर तुम्हारा प्रभाव पड़ने लगेगा। वह अपने असद्व्यवहार पर स्वयं लज्जित होगा और साथ ही तुम में वह उच्च कोटि का आत्मिक बल भी बढ जाएगा जिसके कारण तुम्हारे मन में अच्छे विचार उत्पन्न होंगे। भूल कर भी कभी तुम यह शिकायत न करो कि तुम दास हो, किन्तु सच्चरित्रता और सद्व्यवहार से अपने में उच्च विचार उत्पन्न करो। दूसरे के दास होने की शिकायत करने से पहले, तुम यह समझ लो कि तुम स्वयं अपनी कुवासनाओं के तो दास नहीं हो? अपने भीतर देखो, खूब सोचो और विचारो और अपने दोषों के ढूंढने तनिक भी संकोच मत करो। कठोर हृदय होकर अपने दोषों

को देखो। सम्भव है कि तुम्हें अपने ही भीतर नीच और कुत्सित विचार मिल जायँ, तुम्हारे ही प्रतिदिन के जीवन और व्यवहार में बुरी आदत पाई जायँ। इन नीच विचारों और आदतों को छोड़ दो। अपनी इन्द्रियों के दास मत बनो बस फिर तुम्हें कोई दास नहीं बना सकता। तुम उसी समय तक दूसरों के दास हो, जब तक कि तुम स्वयं अपने दास बने हुए हो। तुम अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर लो, फिर तुम्हारी सारी बुरी अवस्थायें जाती रहेंगी और तुम्हारी हर एक कठिनाई दूर हो जायगी।

कभी इस बात की शिकायत मत करो कि धनवान लोग तुम्हें दुःख देते हैं। क्या तुम्हें इस बात का पूरा पूरा विश्वास है कि यदि तुम्हारे पास द्रव्य होता तो तुम किसी को दुःख न देते याद रक्खो, यह संसार का अटल और अकाट्य नियम है कि जो आज किसी को दुःख देता है, वह कल को अवश्य दुःख पायगा। चाहे राजा हो या रंक, इस नियम से कोई भी नहीं बच सकता है। सम्भव है कि तुम अपने पूर्व जन्म में धनाढ्य होगे और दूसरों को पीड़ा देते होगे, उसी का यह प्रतिफल भोग रहे हो। अतएव विश्वास और दृढ़ता का अभ्यास करो। सदा इस बात का स्मरण रक्खो कि जो कुछ होता है क्रमानुसार होता है। जैसा मनुष्य काम करता है वैसा फल पाता है। कोई किसी को दुःख या सुख नहीं देता। मनुष्य स्वयं अपने दुःख सुख का कर्ता है। जैसे उस के विचार होते हैं, वैसी ही बाह्यावस्था भी होती है। अतएव मनुष्य को उचित है कि अपने आंतरिक दोषों के ढूंढने में सख्ती से काम ले। इस बात में उदासीनता करने की

बराबर आत्मा के लिये संसार में कोई भी हानिकारक वस्तु नहीं है। जो लोग अपने दोषों को ढूंडने में बेपरवाही करते हैं, वे अपनी आत्मा को दिन दिन नीच और पतित बनाते हैं। अतएव जिस तरह हो सके अपने दोषों को ढूढो। दूसरों को बुरा भला कहना छोड़ दो। अपने को बुरा कहो। निरन्तर इस बात का ध्यान रक्खो कि तुम्हारे संपूर्ण कार्य और विचार विशुद्ध, पवित्र और निर्दोष हों। यदि ऐसा नही है तो कदापि उनकी प्रशंसा मत करो। बराबर निन्दा करते रहो। ऐसा करने से तुम्हारी नेकी और भलाई की नींव दृढ हो जायगी और सुख की सामिग्री तुम्हें स्वतः उचित समय पर मिल जायगी।

निर्धनता अथवा अन्य किसी अप्रिय अवस्था को सदा के लिये दूर करने का सब से सीधा और सरल मार्ग यह है कि हम अपने भीतर से स्वार्थयुक्त वासनाओं को निकाल डालें। कारण कि बाह्य अवस्थायें अंतरंग वासनाओं की प्रति रूप हैं और जब तक अंतरंग वासनायें रहेंगी, तब तक बाह्य अवस्थाओं में परिवर्तन नहीं हो सकता। सच्ची दौलत प्राप्त करने का यही मार्ग है कि अपने भीतर नेकी और भलाई के विचार पैदा करो। यदि तुम्हारे मन में सच्ची भलाई के विचार नही है तो न तो तुम सुखी हो सकते हो। और न शक्ति प्राप्त कर सकते हो मैं जानता हूं कि ऐसे मनुष्य बहुत सा रुपया कमा लेते हैं कि जिनमें तनिक भी भलाई नही है और न जिन्हें भला बनने की इच्छा है, परन्तु याद रक्खो ऐसा धन सच्चा धन नहीं है। वह थोड़े दिनों का ही होता है महात्मा दाऊद का कथन है कि "मैं मूर्ख हूं और दुष्टों की बढती देख कर बड़ा विस्मित हुआ।"

मैंने बड़ा पश्चात्ताप किया कि हम व्यर्थ में व्रत उपवास और पूजा भक्ति करते हैं, परन्तु जब मैं ईश्वर के दरबार में गया तो वहां मुझे उसका सन्तोष-जनक उत्तर मिल गया और असली भेद मालूम हो गया। दुष्टों की वृद्धि ने ही दाऊद को ईश्वर के दरबार में भेजा था। वहां उसे सब हाल मालूम हो गया। इसी प्रकार तुम भी उस पवित्र मन्दिर में प्रवेश करो। यह मन्दिर तुम्हारे ही भीतर मौजूद है। यह आत्मा की सर्वोच्च अवस्था है। इस अवस्था में सम्पूर्ण मानसिक विकार और क्षणिक विचार नष्ट हो जाते हैं और ईश्वर-दर्शन होने लगता है इसका नाम परमात्मावस्था है। यही ईश्वर का पवित्र मन्दिर है। जब तुम बहुत कुछ उद्योग करने पर अपनी इच्छाओं का निरोध करके और कषायों का क्षय करके उस पवित्र मंदिर के द्वार पर आओगे, तब तुमको मनुष्य के विचार और उद्योग का परिणाम अच्छा वा बुरा, स्पष्ट रूप से प्रगट हो जाएगा। फिर जब तुम किसी दुष्ट मनुष्य को बात में धन सञ्चय करते देखोगे, तो तुम्हारा श्रद्धान तनिक भी कम न होगा, कारण कि तुम जान जाओगे कि वह मनुष्य एक दिन अवश्य गरीब होगा और दुःख उठाएगा। उसकी बढ़ती थोड़े दिनों के लिए ही है। जिस धनवान् मनुष्य में भलाई नहीं है, वह यथार्थ में निर्धन है। जिस प्रकार नदी का पानी बह कर समुद्र में गिरता है, उसी प्रकार वह भी यद्यपि धनवान् है, परन्तु विपत्ति और निर्धनता की ओर जा रहा है और चाहे वह मरते समय तक धनवान् ही रहे तो भी उसे अपने दुष्कर्मों का प्रतिफल भोगने के लिये अवश्य वापिस आना पड़ेगा और जब तक कि वह बहुत कुछ दुख और अनुभव के बाद अपनी आतरिक

निर्धनता पर विजय प्राप्त नहो कर लेगा, तब तक जितनी बार वह धनी होगा, उतनी बार उसे निर्धन होना पड़ेगा। परन्तु इसके विपरीत जो मनुष्य वाह्य में निर्धन है, परन्तु अतरंग में धनवान् है, अर्थात् जिसके विचार उत्तम हैं; मन शुद्ध है, वह यथार्थ में धनवान् है और दीन होने पर भी वह सुख और ऐश्वर्य की ओर जा रहा है और अपरिमित हर्ष और आनन्द उसके लिए बाट जोह रहे हैं।

यदि तुम यथार्थ में स्थाई रूप से सुखी होना चाहते हो, तो पहले तुम्हें नेक और धर्मात्मा बनना चाहिये। इसके बिना सुख को इच्छा करना, रात दिन उसकी चिन्ता करना और उसके लिये उत्सुक रहना मूर्खता है। यदि तुम ऐसा करोगे, तो तुम्हारी आत्मा गिर जाएगी। तुम्हे कदापि सफलता प्राप्त नहो हो सकती। अपने को उन्नत अवस्था पर पहुँचाने का उद्योग करो। परोपकार और निःस्वार्थ सेवा को अपने जीवन का उद्देश्य बनाओ और सदा उत्तम, नित्य, अविनाशीक भलाई को ग्रहण करने का प्रयत्न करो।

तुम कहते हो कि हमें अपने लिए धन की आवश्यकता नही है, किन्तु तुम्हारा अभिप्राय धन द्वारा दूसरों को लाभ पहुँचाने का है। यदि वास्तव में तुम्हारा यही अभिप्राय है, तो तुम्हें धन अवश्य मिलेगा। परन्तु याद रक्खो कि धन पाकर दृढ और निःस्वार्थ बने रहना। अपने को उसका स्वामो न समझ कर केवल रक्षक या गुमाश्ता समझना। देखो अपनी नियत को अच्छी तरह समझ लो, कारण कि प्रायः देखा गया है कि मनुष्य कहते तो यह है कि यदि हमारे पास धन हो तो हम सब

परोपकार में लगा दें, परन्तु उनकी आंतरिक इच्छा सदैव यह बनी रहती है कि लोग हम से प्रसन्न रहें, हमारी प्रशंसा करें और सुधारकों या परोपकारियों में हमारी गणना हो जाए। यदि तुम अपने थोड़े से धन से जो तुम्हारे पास है दूसरों को लाभ नहीं पहुंचा सकते हो तो जब तुम्हारे पास अधिक धन हो जायगा, तो तुम और भी अधिक स्वार्थी बन जाओगे और यदि मान भी लिया जाय कि तुम अपने रुपये से दूसरों को लाभ पहुँचाने का उद्योग करोगे तो वह केवल प्रतिष्ठा और नामवरी के लिए। अतएव यदि वास्तव में तुम्हारी इच्छा दूसरों को लाभ पहुंचाने की है तो तुम्हें इसके लिये धन दौलत की बाट नहीं देखनी चाहिये। तुम अब भी चाहे जिस हालत में हो दूसरों को लाभ पहुंचा सकते हो।

यदि तुम निश्चय से ऐसे निःस्वार्थी और परोपकारी हो जैसे कि तुम अपने को समझते हो, तो तुम इस समय भी स्वयं हानि उठा कर दूसरों का भला कर सकते हो चाहे तुम कितने ही निर्धन हो, तो भी तुम में स्वार्थ की आहुति देने की शक्ति है। तुम अवश्य दूसरों के निमित्त कुछ न कुछ अर्पण कर सकते हो। जिस मनुष्य के हृदय में परोपकार का अंकुर विद्य-मान है, जो सच्चे दिल से दूसरों का भला चाहता है वह रुपये पैसे की बाट नहीं देखता। वह रुपये के स्थान में अपने जीवन को अर्पण कर देता है। वह अपने मन से स्वार्थ, द्वेष, कषाय और वासना को निकाल कर अपने और पराये का भेद भाव दूर करके मित्र और शत्रु सब के साथ समान व्यवहार करता है, सब का भला चाहता है और सब को लाभ पहुँचाता है।

जिस प्रकार कार्य कारण का सम्बन्ध है, उसी प्रकार सुख और ऐश्वर्य का आंतरिक भलाई से निर्धनता और निर्बलता का आंतरिक बुराई से सम्बन्ध है। अर्थात् जिस प्रकार कारण के अनुसार कार्य होता है, उसी प्रकार यदि तुम्हारे आंतरिक विचार अच्छे हैं तो तुम्हें सुख और ऐश्वर्य मिलेगा और यदि बुरे और गंदे हैं तो दुःख और संताप मिलेगा।

रुपया सच्ची दौलत नहीं है और न पद वा प्रतिष्ठा ही सच्ची दौलत है। अतएव केवल इन पर भरोसा करना ऐसी चिकनी और ढालू जमीन पर खड़ा होना है कि जहां से पैर फिसलने का भय है।

तुम्हारी असली दौलत तुम्हारी नेकी है और तुम्हारी असली ताकत उस नेकी का ठीक ठीक काम में लाना है। अर्थात् जितनी नेकी तुम दूसरो के साथ करोगे, उतनी ही अधिक तुम्हारी ताकत समझी जायगी। अपने हृदय को शुद्ध कर लो अपने दिल को साफ़ कर लो, तुम्हारा जीवन स्वतः सुधर जायगा। विषय-वासना, राग द्वेष, काम क्रोध, लोभ, मोह, मद, माया, अहंकार, स्वार्थ और दुराग्रह, ये सब निर्बलता और निर्धनता के चिन्ह हैं। इनके विपरीत प्रेम, पवित्रता, नम्रता, सभ्यता, शील, संतोष, दया, अनुकम्पा, उदारता, निःस्वार्थता, इंद्रियनिग्रह और आत्म-संयम ये सब धन और बल के सूचक हैं।

जब मनुष्य निर्धनता और निर्बलता के कारणों को दूर कर देता है तो उसके भीतर स्वयमेव एक अक्षय और अजय शक्ति का प्रादुर्भाव होता है और जो मनुष्य उच्च कोटि का नेक और

धर्मात्मा बन जाता है वह सपूर्ण संसार को अपने आधीन कर लेता है।

परन्तु अमीर और गरीब सभी को अप्रिय अवस्थाओं मे से निकलना पड़ता है। अमीरों को बल्कि ग़रीबों की अपेक्षा अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। इससे प्रगट है कि सुख सांसारिक वस्तुओ पर निर्भर नहीं हैं। सुख का आधार अन्तरग जीवन है। मान लो कि तुम मालिक हो और तुम्हें अच्छे नौकरों के न मिलने के कारण बड़ी तकलीफ उठानी पड़ती है। यदि कभी अच्छे ईमानदार नौकर मिल भी जाते हैं तो वे जल्दी नौकरी छोड़ कर चले जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि धीरे धीरे तुम्हारा विश्वास लोगों पर से हटता जाता है या बिल्कुल जाता रहता है। अब तुम नौकरों को मजूरी भी अधिक देते हो, और उन्हें छुट्टी और आज़ादी भी पहले से ज़्यादह देते हो, तो भी नौकरो का वही हाल है। ऐसी दशा में, मैं तुम्हें यह सलाह दूँगा कि तुम्हारी कठिनाइयों का कारण तुम्हारे नौकरों में नहीं है, किंतु स्वयं तुम में है। यदि तुम अपने हृदय के भीतर प्रवेश करके देखो, और शुद्ध अन्तःकरण से अपने दोषों को ढूंढने और उनके दूर करने का प्रयत्न करो तो तुम्हें देर सवेर कभी न कभी अपने दुःख और कष्ट का कारण ज्ञात हो जायगा। संभव है कि तुम में कोई ऐसी स्वार्थयुक्त इच्छा हो, अथवा तुम्हारे मन में ऐसा अविश्वास वा अप्रिय भाव हो कि जो न केवल दूसरों पर किंतु स्वयं तुम पर अपना विषैला प्रभाव डालता हो, चाहे तुम अपने भावों और शब्दों से उसको प्रगट न भी करो। अपने नौकरों के साथ सदैव दया का व्यवहार करो, उनके सुख दुःख का निरन्तर ध्यान रक्खो, कभी उनसे हद से ज्यादह काम

न लो और यह सोचो कि यदि तुम उनकी दशा में होते तो तुम भी इतना काम करना पसद न करते। इसमें सदेह नही कि नौकर मे ऐसी नम्रता का होना कि वह अपने मालिक की भलाई करने में अपने आपे को बिलकुल भुला दे, बहुत ही उत्तम और सुन्दर है, परन्तु इससे भी अधिक उत्तम और सुन्दर वह नम्रता और उदारता है कि जिससे मालिक अपने सुख को भूल कर अपने आधीनस्थ सेवको और आश्रितों के सुख का ध्यान रक्खे। ऐसे आदमी की खुशी दसगुणी बढ़ जाती है और फिर उसे अपने नौकरों की शिकायत करने की जरूरत नही रहती। एक प्रसिद्ध मनुष्य का जिसके यहा बहुत से नौकर थे और जिसे कभी एक नौकर के भी हटाने की जरूरत नही हुई, कथन है कि "मेरे नौकर सदैव मुझ से प्रसन्न रहते हैं। यदि तुम इसका कारण पूछो तो मैं यही कह सकता हू कि मेरी शुरू से ही यह इच्छा रही है कि मैं उनके साथ वैसा ही व्यवहार करूँ जैसा कि मैं चाहता हू कि और लोग मुझ से व्यवहार करे।" बस यही सफलता का रहस्य है। ऐसा करने से ही मनुष्य सर्व प्रकार के सुख लाभ कर सकता है और अप्रिय अवस्थाओं से निकल सकता है। यदि तुम यह कहते हो कि हम अकेले हैं, हम से कोई प्रेम का व्यवहार नही करता और इस संसार में हमारा कोई भी मित्र वा सहायक नही है, तो मै यहां तुम से तुम्हारे ही हित के लिए यह प्रार्थना करता हूं कि इस विषय में तुम अपने सिवाय और किसी को दोष मत दो। इसमें सर्वथा तुम्हारा ही दोष है। दूसरो के साथ मित्रता का व्यवहार करो, फिर देखो सैकड़ो आदमी तुम्हारे गिर्द आन कर जमा होजएगे। अपने आपको शुद्ध, सदाचारी और प्रेमपात्र बनाओ, फिर सब

तुम से प्रेम और स्नेह करने लगेगे। फ़ारसी के प्रसिद्ध विद्वान शेख़सादी ने कहा है कि जहा कही पानी का मीठा चश्मा होता है वहां सब पशु पक्षी और मनुष्य अपने आप जमा हो जाते हैं।

जो जो बाते तुम्हारे जीवन को दुःखदाई बना रही हैं, तुम उन सब को दूर कर सकते हो, यदि तुम अपने हृदय को शुद्ध कर लो और अपने मन को अपने वश में कर लो। चाहे तुम्हे निर्धनता सताये (स्मरण रहे यहा पर निर्धनता से तात्पर्य उस निर्धनता से है जो दुःख और विपत्ति का कारण है न कि उस निर्धनता से जो मुक्त जीवो के लिये गौरव की वस्तु है), चाहे धन संपदा तुम्हारे लिये जजाल हो और चाहे दुखः, कष्ट और शोक तुम्हे अप्रिय मालूम होते हो, तुम उन सब को दूर कर सकते हो, यदि तुम अपने भीतर से स्वार्थ को निकाल दो। स्वार्थ के कारण ही वे सब दुःख का कारण हो रहे हैं।

कर्म का सिद्धात अटल है। जैसा हमने पूर्व जन्म में किया, अथवा इसी जन्म में किया, उसका फल हम भोग रहे है। जैसा हम अब करेगे, उसका फल आगे भोगेंगे। हम प्रतिक्षण पिछले कर्मो को उदय मे लाते और आगे के लिये नवीन कर्मों का बध करते है। मान लो कि किसी मनुष्य का धन चोरी चला गया अथवा किसी का पुत्र मर गया, अथवा कोई अपने पद से गिर गया तो समझना चाहिये कि उसने पूर्व मे कुछ ऐसे बुरे कर्म किये होगे कि जिनका यह बुरा फल उसे मिला। परन्तु इससे उसे निराश या हतोत्साह नही होना चाहिये, कारण कि उसमे नवीन कर्मो के करने की शक्ति है। उसे समझना चाहिये कि मैंने पहले कोई बुरा कर्म किया होगा, उसका यह फल मुझे

मिला। मै इस फल को उदासीनता से भोग लूं और आगामी के लिए शुभ कर्मों का बंध करू कि जिससे आगामी में उनका अच्छा फल मुझे मिले। यदि इस समय में इन दुःखों को,भोगते हुए अपने मन में दुःखी हूँगा तो यह मेरे लिये हानि का कारण होगा, कारण कि इस समय दुःख मनाने से अथवा कषाय करके दूसरे को दोष देने से मै अपने लिए फिर अशुभ कर्मों का वध बाँधूंगा और उसका बुरा फल फिर मुझे आगामी में भोगना पड़ेगा। जो मनुष्य दुःखों की उदासीनता के साथ सहन कर लेता है और अच्छे कामो के लिये उद्योग करता है और सच्चाई और ईमानदारी पर जमा रहता है, वह सदा सुखी और प्रसन्न रहता है।

जो मनुष्य स्वार्थ में लिप्त रहता है, वह स्वयं अपना शत्रु और उसके चहुँ ओर शत्रु घिरे रहते है,परन्तु जो मनुष्य स्वार्थ को त्याग देता है, वह स्वयं अपना रक्षक है और उसकी रक्षा के लिये उसके चहुँ ओर मित्र घिरे रहते हैं। विशुद्ध हृदय मनुष्य के ईश्वरीय प्रकाश के सामने सपूर्ण अन्धकार नष्ट हो जाता है और मेघ पलायमान हो जाते है, अर्थात् जब मनुष्य का हृदय पवित्र हो जाता है तो उसमें से संपूर्ण विकार और कुत्सित भाव निकल जाते हैं। जिस मनुष्य ने अपने को वश में कर लिया है उसने मानों सपूर्ण संसार को जय कर लिया है। अतएव तुम भी अपनी इन्द्रियो को अपने वश में करलो, अपने हृदय को विशुद्ध बना लो, अपने ऊपर अधिकार प्राप्त कर लो, तुम्हारी निर्धनता जाती रहेगी, और तुम्हारे संपूर्ण दुःख दूर हो जाएंगे फिर तुम्हें कोई शिकायत नही रहेगी,। बस अधिक देर मत करो, स्वार्थपरता के फटे पुराने चीथड़ों को अपने शरीर पर से उतार डालो और उसके स्थान में सर्वप्रेम के सुंदर वस्त्र को

धारण करो। उस समय तुमको अपने भीतर स्वर्ग दिखलाई देगा और उसका प्रतिबिंब तुम्हारे बाह्य जीवन पर पडेगा।

जो मनुष्य दृढता के साथ आत्मत्याग और इन्द्रियनिग्रह के मार्ग पर कदम रखता है और विश्वास रूपी यष्टिका (लाठी) के सहारे चलता है उसे निश्चय से विजय और सफलता होगी और स्थाई और अपरिमित सुख की प्राप्ति होगी।

४. मन की गुप्तशक्ति मानुषीशक्तियों को वश में रखना और सन्मार्ग पर लगाना ।

संसार में सब से प्रबल शक्तियां वे हैं जो गुप्त और अव्यक्त रूप से काम करती हैं और उनमें जितनी जिसकी शक्ति अधिक होती है उतनी ही वह सन्मार्ग पर लगाने से उपयोगी और कुमार्ग पर लगाने से हानिकर होती है । भाप, बिजली आदि पदार्थों के विषय में तो यह बात प्रत्यक्ष है और सब कोई इसे जानते हैं, परन्तु ऐसे लोग अभी बहुत ही कम हैं जो इस ज्ञान को मन के विषय में लगा सकें । मन में विचार शक्तियां जो सब से अधिक प्रबल होती है निरन्तर पैदा होती रहती हैं और सुख अथवा दुःख का रूप धारण करके सर्वत्र पहुँचाती रहती है ।

जब मनुष्य उन्नति करते करते इस अवस्था में पहुंच जाता है, तो वह इन सब शक्तियों पर अधिकार प्राप्त कर लेता है । इस स्थूल जगत् में मनुष्य की संपूर्ण बुद्धिमानी इस बात में है कि वह अपने मन को पूर्णतया अपने वश में रक्खे, स्वार्थ को अपने हृदय से सर्वथा निकाल दे । ईश्वर की आज्ञा है कि

"अपने शत्रुओ से भी प्रेम करो" इसके अर्थ यही है कि जो मानसिक शक्तियाँ मनुष्य को स्वार्थपरता और विषयवासना की ओर ले जाती हैं और जिनका वह दास बना हुआ है, उन्हे पूर्ण रूप से अपने वश मे कर ले और उन पर अपना पूरा पूरा अधिकार जमा ले।

यहूदी भविष्यद्वक्ताओं को ईश्वरीय नियमो का पूरा पूरा ज्ञान था। वे सदा बाह्य घटनाओं का आंतरिक विचारों से संबन्ध बतलाया करते थे, यहाँ तक कि समाज के उत्थान और पतन को वे उस समय के सामाजिक विचारो और भावो का कार्य बतलाते थे। विचार में कितनी प्रबल शक्ति है इसके ज्ञान से ही वे भविष्य-वाणी किया करते थे। वास्तव में यही ज्ञान सम्पूर्ण शक्ति और बुद्धिमानी का कारण है। सामाजिक घटनाएं केवल समाज की मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियो का परिणाम हैं। दुर्भिक्ष महामारी और संग्राम मानसिक शक्तियो के दुरुपयोग से पैदा होते है और ईश्वरीय नियमानुसार नाश का कारण होते हैं। किसी एक व्यक्ति अथवा एक समुदाय को युद्ध का कारण बतलाना मूर्खता है। इसका कारण परले दरजे की सामाजिक स्वार्थपरता ही है।

धीरे धीरे काम करने वाली और सब पर असर डालने वाली यही विचार शक्तियां हैं जिनसे सब बाते प्रगट होती हैं। और तो क्या यह सपूर्ण संसार ही विचार से उत्पन्न हुआ है। पुद्गल के विषय में यदि काट छांट की जाय तो यही ज्ञात होगा कि पुद्गल केवल एक विचार है जो स्थूल रूप में आ गया है। मनुष्य के सपूर्ण कार्य पहले विचार रूप में थे, पीछे

स्थूल रूप मे आप। ग्रंथकार, चित्रकार, शिल्पकार पहले अपने काम का नक्शा अपने मन में बनाते हैं, अर्थात् वे जो कुछ लिखना या बनाना चाहते हैं, पहले उनका ढाँचा अपने मन में सोच लेते हैं, पीछे उसे बाह्य रूप में लाते हैं। भावार्थ, कोई भी काम हो, पहले उसका मन में विचार आता है, पीछे वह काम होता है।

जब मानसिक शक्तियों का ईश्वरीय नियम के अनुसार सदुपयोग किया जाता है, तो उन से उत्तम और पवित्र विचारो की एसी पक्की इमारत बनती हैं कि जिस का कभी नाश नहीं होता पन्रतु यदि उनका दुरुपयोग किया जाए तो उनसे यह इमारत कमज़ोर होकर अपने आप नष्ट होजाती है।

यदि तुम अपने विचारों को उत्कृष्ट भलाई की सर्व शक्ति और उच्चता की ओर पूर्ण श्रद्धा से लगाओगे तो तुम उस भलाई के साथ मिल कर काम कर सकोगे और तुम्हें स्वयं अपने भीतर प्रत्येक बुराई तथा उसके नाश करने के कारण का अनुभव हो जाएगा। श्रद्धा करो, फिर तुम्हारा जीवन आनन्द से व्यतीत होगा। पहले सम्यक् श्रद्धा की ज़रूरत है। मुक्ति के वास्तविक अर्थ यही हैं। अर्थात् नित्य और अविना-शीक भलाई के अनन्त प्रकाश में प्रवेश करके तथा अपने मन में उस का पूर्णतया विचार और अनुभव करके बुराई के अंध-कार से बचे रहना और उससे इन्कार करना।

जहाँ कहीं भय, शङ्का, चिंता, व्यथा अथवा दुःख शोक और निराशा होती है वहां अज्ञानता और अश्रद्धा होती है। इन संपूर्ण मानसिक अवस्थाओं का कारण स्वार्थपरता और

बुराई की शक्ति में श्रद्धा का होना है। ऐसी श्रद्धा का होना नास्तिकता का सूचक है। जो मनुष्य ऐसी नीच और पतित मानसिक अवस्थाओं मे जीवन व्यतीत करता है और उनके आधीन रहता है, वह वास्तव मे नास्तिक है।

एसी अवस्थाओं से प्रत्येक व्यक्ति और जाति को पृथक रहना चाहिये। जब तक मनुष्य उनके वश में है और उन का दास बन रहा है, तब तक उसको कदापि मुक्ति नही मिल सकती। भय खाना या चिंता करना ऐसा ही पाप है, जैसा कि किसी को श्राप देना, कारण कि जिस मनुष्य को नित्य न्याय, अनन्त प्रेम और भलाई की सर्वशक्ति पर दृढ़ विश्वास है, वह न तो कभी भय खा सकता है और न कभी चिंता कर सकता है। भय खाना, चिंता करना और शङ्का करना ईश्वर के अस्तित्व से इन्कार करना है।

इन्ही मानसिक अवस्थाओ से सर्व प्रकार की निर्बलता और असफलता देखने मे आती है, कारण कि यह अवस्थाएँ विचार की उत्तम शक्तियों को काटने वाली और नाश करने वाली हैं। यदि ये अवस्थाये न होती तो यह शक्तिया अपने अभीष्ट को बलपूर्वक प्राप्त कर लेती और उनसे उत्तम और उपयोगी परिणाम निकलते।

जो मनुष्य इन हानिकर अवस्थाओ पर विजय प्राप्त कर लेता है, अर्थात इनको दूर कर देता है, वह उच्चतर जीवन में प्रवेश करता है और दासत्व के बधन से निकल कर स्वामित्व पद को प्राप्त करता है। अब प्रश्न यह है कि इन अवस्थाओं पर विजय प्राप्त करने का क्या उपाय है ? केवल एक उपाय

है और वह यह कि मनुष्य दृढता के साथ अपने आंतरिक अर्थात् मानसिक ज्ञान की उन्नति करता रहे। केवल मन में बुराई से इनकार करना काफी नहीं है। प्रतिदिन उसकी असलियत को समझने और उसके छोड़ने का अभ्यास करना चाहिये। इसी प्रकार केवल मन में भलाई को स्वीकार करना काफी नही है। निरन्तर उसको समझने और प्रवृत्ति में लाने का उद्योग करना चाहिये।

जो मनुष्य अपने को वश मे करना जान जाता है, उसे अपनी भीतरी मानसिक शक्तियो का शीघ्र ज्ञान हो जाता है और धीरे धीरे उसे उन्हे सन्मार्ग पर लगाने की शक्ति भी प्राप्त हो जाती है। जितना तुम अपने ऊपर अधिकार प्राप्त करोगे और अपनी मानसिक शक्तियों के वश में होने के बजाय उनको अपने वश मे करोगे, उतना ही बाह्य वस्तुओ और घटनाओ पर तुम्हारा अधिकार हो जायगा और उनको तुम समझने लगोगे।

मुझे कोई ऐसा मनुष्य दिखलाओ कि जिसके स्पर्श करने से प्रत्येक वस्तु राख के समान चूर चूर हो जाती है और जो हाथ मे आई हुई सफलता को भी नही रख सकता है। मैं तुम्हे सिद्ध कर दूगा कि वह सदा मन की नीच और पतित अवस्थाओं में जीवन व्यतीत करता है। सदा सन्देह के कीचड़ मे पडे रहना, निरन्तर भय के बालू रेत में फँसे रहना, और रात दिन चितारूपी आंधी के झोंकों से परेशान रहना दास बनना है और दासत्व का जीवन व्यतीत करना है, चाहे प्रभुत्व, अधिकार और सफलता भीतर आने के लिये सदा द्वार को खटखटाती रहें। ऐसा मनुष्य श्रद्धाहीन

है, उसके भाव और विचार उसके वश मे नही है, इस कारण वह अपने काम का ठीक प्रवन्ध नही कर सकता और घटनाओ का दास बन रहा है। वास्तव में वह अपना दास आप है। ऐसे मनुष्यो को विपत्ति शिक्षा देती है। और वे अन्त मे बहुत कुछ अनुभव के बाद समय की नर्मी गर्मी सह कर निर्बलता से बल प्राप्त करते है।

श्रद्धा और संकल्प जीवन की मुख्य प्रेरक शक्तियां है। संसार में कोई भी कार्य ऐसा नही है कि जो अटल विश्वास और दृढ सङ्कल्प के द्वारा पूरा न हो सके। प्रति दिन विश्वास के बल से मानसिक शक्तियां एकत्र हो जाती हैं और प्रतिदिन संकल्प की दृढता से वे शक्तियां काम के पूरा करने की तरफ लग जाती है।

संसार में चाहे तुम किसी भी स्थिति में हो, तुम उस समय तक किसी भी अश में शक्ति, लाभ और सफलता की आशा नही कर सकते कि जब तक तुम शांति और सतोष के द्वारा अपनी मानसिक शक्तियों को एक ओर आकर्षित करना न सीखो संभव है कि तुम कारवारी आदमी हो और तुम्हें अचानक किसी विपत्ति या कठिनाई का सामना करना पडे। ऐसी दशा में तुम भयभीत हो जाते हो और चिता में पड जाते हो कि क्या करें। स्मरण रहे कि ऐसी मानसिक अवस्था का बराबर बने रहना नाश का कारण है, कारण कि जब चिंता हो जाती है तो ठीक ठीक सोचने और समझने की शक्ति जाती रहती है। अब तुम यदि सवेरे उठते ही या संध्या के समय अवकाश पाने पर दो चार घड़ी के लिये किसी निर्जन स्थान में चले जाओ अथवा अपने घर मे ही किसी एकांत स्थान मे

चले जाओ कि जहा कोई वाधक न हो और वहां आराम से बैठ कर अपने मन से जबरदस्ती चिन्ता को निकाल कर उसे अपने जीवन की अन्य किसी उत्तम और सुखदायक वस्तु की ओर लगाओ तो निश्चय से तुम्हारे मन मे धीरे २ शाति आती जाएगी और तुम्हारी चिता जाती रहेगी। जब कभी तुम अपने मन को भय और चिता की अवस्था में आते देखो, उसी समय उसे वहां से हटा कर सन्तोष और शांति की ओर ले जाओ। जब तुम्हारे हृदय में पूर्णरूप से शांति हो जाए, तब तुम निर्भय होकर अपनी कठिनाई के दूर करने में अपने मन को लगाओ। जो वात तुम्हे भय और चिता की अवस्था में कठिन और अजेय मालूम होती थी, वही अब बिलकुल सरल और स्पष्ट हो जाएगी और अब तुम निर्दोष सम्मति और पूर्णविचार शक्ति से स्पष्ट रूप से देख सकोगे कि कठिनाई को दूर करने का कौनसा सरल उपाय है और किस प्रकार इच्छितफल की प्राप्ति हो सकती है। सभव है कि तुम्हे अपने मन को वश में करने और अपने हृदय में शाति उत्पन्न करने के लिये लगातार कई दिन तक उद्योग करना पडे, परन्तु यदि तुम दृढता से अपने कार्य में तत्पर रहोगे तो तुम्हें निश्चय से सफलता होगी। शाति की हालत में जो मार्ग तुम्हे दिखाई दे, उसमें प्रवृत्त रहना चाहिये। सभव है कि जब तुम फिर अपने दैनिक कार्य व्यवहार मे लगो और भय और चिता तुम्हें आकर सताये, तो तुम यह सोचने लगोगे कि वह मार्ग ठीक नही है और उसके अनुसार प्रवृत्ति करना मूर्खता है, परन्तु तुम ऐसे विचारो को अपने मन में स्थान मत दो। जो वात तुम्हें शांति की हालत में सूझी थी विल-

कुल उसके अनुसार कार्य करो, भय और चिन्ता के विचारो को ओर मत जाओ। शांति के समय सब बात साफ मालूम होती हैं और उस समय विचार शक्ति भी निर्दोष होती है। इस प्रकार मन को साधने से भिन्न भिन्न विचार की शक्तियां जो इधर उधर तितर बितर हो रही हैं, एकत्र होकर विचारणीय विषय की ओर लग सकती है और कठिनाई को दूर कर सकती है।

ससार में ऐसा कोई भी काम नही है कि जो एकाग्रचित्त होकर शाति से करने से आसान नही हो जाता और ऐसा कोई पदार्थ नही है कि जो आत्मिक शक्तिया को सावधानी और बुद्धिमानी से उपयोग में लाने से प्राप्त नही हो जाता।

जब तक मनुष्य अपनी भीतरी अवस्था का ध्यानपूर्वक विचार नही करता और अपने भीतरी शत्रुओ अर्थात् क्रोधादि कषायों और वासनाओ को जय नहीं करता, तब तक उसको विचार शक्ति की प्रबलता का ठीक ठीक अनुमान नहीं हो सकता और न इस बात का ज्ञान हो सकता है कि मन का बाह्य और स्थूल पदार्थों से कैसा कार्य कारण का अविनाभावी सॅवन्ध है और जीवन की भिन्न २ अवस्थाओ के समझने और उनके परिवर्तन करने से विचार में यदि उस की ठीक जांच करके उसे सन्मार्ग पर लगाया जाय तो कैसी और कितनी प्रबल शक्ति है।

प्रत्येक विचार जो तुम्हारे मन में आता है एक तीर के सदृश है। उसमें जितनी शक्ति और तेजी होगी, उसी के अनुसार वह दूसरे मनुष्यो के हृदयों मे जाकर असर करेगा और

फिर लौट कर तुम पर अपना बुरा या भला असर डालेगा। एक मन का दूसरे मन से परस्पर में सम्बन्ध होता है और विचार शक्तियां बराबर एक दूसरे में आती जाती रहती है। स्वार्थ और अशांति के पैदा करने वाले विचार नीच और नाशक शक्तियां है, उन्हे दुष्टता के दूत समझना चाहिये। वे दूसरे मनुष्यो के मन में दुष्टता के विचार पैदा करने और उन्हे बढाने के लिये भेजे जाते हैं, परन्तु उनके मन इन दुष्टता के दूतो अर्थात् दुष्टता के विचारों को और भी अधिक प्रवल बना कर उलटा तुम्हारे पास भेज देते है। इसके विपरीत पवित्रता निःस्वार्थता और शांति के विचार देवदूतो के सदृश है जो स्वर्ग से इस पृथिवी पर सुख, शांति और ऐश्वर्य लाते हैं और दुष्ट और हानि कर शक्तियों को रोकते है, शोक और सताप का काला मुंह करके हर्ष और आनन्द उत्पन्न करते है और जो मनुष्य निराशा रूपी गड्ढे में पड़े हुए है उन्हे मुक्ति की आशा दिलाते है।

अपने मन में उत्तम विचारो को स्थान दो। वे विचार शीघ्र ही तुम्हारे बाह्य जीवन में उत्तम अवस्थाओ के रूप में प्रकट होंगे। अपनी आत्मिक शक्तियो को अपने वश मे रक्खो ऐसा करने से तुम अपने वाह्य जीवन को जैसा चाहो वैसा बना सकोगे। मुक्तिदाता और पापी मनुष्य में यही अन्तर है कि यह अपनी इन्द्रियो के वश मे होता है, परन्तु उसकी इन्द्रियां उसके वश में होती हैं।

वास्तविक शक्ति और स्थाई सुख की प्राप्ति को इसके सिवाय और कोई मार्ग नही है कि मनुष्य अपनी इन्द्रियों को अपने वश में रक्खे, और अपनी आत्मा को पवित्र बनावे। जो

मनुष्य अपनी इन्द्रियों के वश में होता है, वह सदैव निर्बल और दुःखी रहता है और संसार को इससे कोई लाभ नहीं पहुँच सकता। यदि तुम संसार में सुख और ऐश्वर्य प्राप्त करना चाहते हो तो तुम्हें उचित है कि राग द्वेष, काम क्रोध, लोभ मोह, रति अरति आदि मानसिक कषायों और वासनाओं को कम करो। जितना तुम अपनी मानसिक अवस्थाओं के आधीन रहोगे, उतना ही तुम इस जीवन में दूसरों के आश्रय रहोगे और वाह्य सहायता की इच्छा करोगे। यदि तुम शांति और दृढता से जीवन व्यतीत करना चाहते हो और प्रत्येक कार्य को पूर्णरूप से करना चाहते हो तो तुम्हें आवश्यक है कि अपने मन की संपूर्ण बाधा डालनेवाली और समय समय पर बदलने वाली अवस्थाओं को अपने वश में करना सीखो। तुम्हे प्रतिदिन एकांत में बैठ कर अपने चित्त को एकाग्र करने का अभ्यास करना चाहिये। इसी का नाम ध्यान करना है। ध्यान करने से चिंता दूर होकर मन में शांति उत्पन्न होती है और निराशा और निर्बलता के विचार निकल कर मन में शक्ति और आशा का संचार होता है। तब तक तुम्हे ऐसा करने में सफलता न होगी, जब तक तुम अपने जीवन के कार्यों और उद्देश्यों में अपनी मानसिक शक्तिया से सफलतापूर्वक काम लेने की आशा नही कर सकते। यह एक ऐसा उपाय है कि इससे मनुष्य अपनी भिन्न भिन्न तितर वितर हुई शक्तियों को एक मार्ग पर लगा सकता है और जो चाहे सो कर सकता है। जिस प्रकार किसी निकम्मी दल दली ज़मीन को उसके इधर उधर गढ्ढों में भरे हुए पानी का एक अच्छी नाली में ले जाकर एक हरे भरे लहलहाते हुए

खेत या फले फूले बागीचे के रूप में बदल सकते हैं, उसी प्रकार जो मनुष्य शांति प्राप्त करता है और अपने आंतरिक विचारों को अपने वश में करके सन्मार्ग पर लगाता है, वह अपनी आत्मा को मुक्त करता है, और अपने हृदय और जीवन को मालामाल करता है।

जितना तुम अपने भावो, इच्छाओं और विचारों को अपने वश में करने में सफलता प्राप्त करोगे, उतना ही तुम अपने भीतर एक नवीन और अव्यक्त शक्ति उत्पन्न होते हुए देखोगे और तुम्हे शाति और बल प्राप्त होगा। तुम्हारी भीतरी अव्यक्त शक्तियां स्वयमेव प्रकट होने लगेगी। इससे पहले तुम्हारा उद्योग निर्बल और निष्फल रहता था, परन्तु अब तुम शांतचित्त होकर काम करने लगोगे और सफलता तुम्हें अवश्य प्राप्त होगी। इस नवीन शक्ति और शांति के साथ तुम्हारे भीतर एक प्रकाश, उत्पन्न होगा जिसका नाम ब्रह्मज्ञान वा ईश्वर-दर्शन है। अब तुम्हारा अज्ञान और अंधकार जाता रहेगा और तुम्हे प्रत्येक वस्तु स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष दिखाई देने लगेगी। इस ईश्वर-दर्शन और आत्म ज्ञान के साथ तुम्हारी बुद्धि और विचार शक्ति भी बढ़ जायगी और तुम्हारे भीतर वह शक्ति पैदा हो जायगी कि जिसके द्वारा तुम भावी घटनाओं को पहिले से ही जान सकोगे और अपने श्रम उद्योग का फल भी ठीक २ पहले से ही विचार सकोगे। जितना परिवर्तन तुम्हारी आंतरिक अवस्था में होगा उतना ही तुम्हारे वाह्य कार्यों में भी होगा एवम् दूसरों के प्रति तुम्हारी मानसिक अवस्था मे जितना परिवर्तन होगा, उतना ही तुम्हारे प्रति उनकी मानसिक अवस्था में भी

परिवर्तन होगा । जितनी तुम विचार की नीच, पतित, निर्बल और नाशक शक्तियों पर विजय प्राप्त करोगे, उतनी ही उच्च, पवित्र, और प्रबल विचारों से उत्पन्न होने वाली शक्तिपद और उन्नतिशील लहरे तुम्हारी भीतर प्रकट होगी । तुम्हारे हर्ष की कोई सीमा न रहेगी और तुम उस बल, शक्ति और आनन्द का अनुभव करने लगोगे कि जो केवल इन्द्रिय-निग्रह और आत्म-विजय से उत्पन्न होते हैं। यह बल, शक्ति और आनन्द स्वतः स्वयमेव सूर्य के प्रकाश की भांति निरन्तर दूसरो पर अपना प्रभाव डालते रहेंगे । तुम्हें इसका ज्ञान तक भी न होगा । दृढ चित्त मनुष्य स्वतः तुम्हारे चहुँ ओर जमा रहेंगे और तुम्हारा प्रभाव दिन दिन बढ़ता जाएगा । जितना तुम्हारे विचारो में परिवर्तन होगा, उतना ही तुम्हारे बाह्य जीवन में भी परिवर्तन होगा ।

मनुष्य के शत्रु उसी के घर के लोग होते है । जो मनुष्य अपने को उपयोगी और बलवान् बनाना चाहता है और प्रसन्न चित्त रहना चाहता है, उसे आवश्यक है कि गंदे, नापाक और घृणित विचारों को अपने मन में न आने दे । जिस प्रकार किसी घर का बुद्धिमान् स्वामी अपने सेवकों पर शासन करता है और अपने मित्रों और अतिथियो को आमन्त्रित करता है, उसी प्रकार यह भी आवश्यक है कि वह अपनी इच्छाओं को अपने वश में करे और बल पूर्वक कह सके कि मैं अमुक विचारो को ही अपने मन में प्रवेश करने दूगा । जो मनुष्य अपनी इन्द्रियों को अपने वश में करने और अपनी इच्छाओ का निरोध करने में तनिक भी सफलता प्राप्त कर लेता

है, उसकी शक्ति बहुत कुछ बढ जाती है और जो मनुष्य स्वार्थ-परता, और इन्द्रियलोलुपता को बिलकुल निकाल देता है अर्थात् जिसकी इन्द्रियां जिसके वश में हो जाती है और जो अपने विचारों पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेता है, उस के अन्तरग में अपूर्व शक्ति और शांति का प्रादुर्भाव होता है और उस बुद्धि का विकास होता है कि जिस का कभी उसने स्वप्न में भी अनुमान नहीं किया था। वह अब इस बात का अनुभव करने लगता है कि ससार की जितनी भी शक्तियां है, वे सब उसकी रक्षा और सहायता के लिए तैयार है, जिसकी इद्रियां जिसके वश में है और जो अपनी आत्मा का सर्वाधिकार सम्पन्न स्वामी है।

५. स्वास्थ्य, सफलता और शक्ति प्राप्त करने का गुप्त रहस्य।

जो मनुष्य प्रतिदिन अपने हृदय में उत्कृष्ट भलाई और नेकी को स्थान देने का उद्योग करते है, वे निश्चय से वास्तविक सुख, स्वास्थ्य और सम्पत्ति को प्राप्त करते हैं। भलाई और नेकी की बराबर कोई रक्षा नही है। भलाई से मेरा तात्पर्य केवल यह नही है कि सदाचार के नियमो का वाह्य में पालन किया जाए, किन्तु यह अभिप्राय है कि हमारे विचार विशुद्ध और पवित्र हों, हमारी आकाक्षाएं उच्च हो, हमारा प्रेम निःस्वार्थ हो और हम में व्यर्थ का थोथा अभिमान न हो। सदा सद्विचारों मे जीवन व्यतीत करना मानो अपने चहुँ ओर शक्ति और प्रेम की वायु बहाना है, जिसका उन समस्त मनुष्यो पर प्रभाव पड़ता है कि जो उस वायु मे स्वास लेते है।

जैसे सूर्य के प्रकाश से निर्मूल अन्धकार का नाश हो जाता है उसी प्रकार विशुद्ध हृदय और दृढ़ विश्वासी मनुष्य के प्रबल विचारो की सर्वव्यापी किरणों के आगे बुराई की संपूर्ण

निर्बल शक्तियां नष्ट हो जाती है और उनका कही चिन्ह भी नही रहता ।

जहां कहीं दृढ विश्वास, सम्यक् श्रद्धान और पवित्रता का सद्भाव होता है, वहां पर शक्ति, स्वास्थ्य और सफलता तीनों मौजूद होती हैं। ऐसी अवस्था में रोग, आपदा और असफलता कदापि नही ठहर सकती, कारण कि उनकी पुष्टि के लिए वहां कोई वस्तु नही होती ।

शारीरिक अवस्थाएं भी अधिकतर मानसिक अवस्थाओ पर निर्धारित होती है विज्ञान-शास्त्र भी इस सिद्धान्त को मानता जाता है । जो लोग मन और आत्मा को भी नही मानते थे और कहते थे कि मनुष्य केवल शरीर पर बना हुआ है, अर्थात् शरीर के अतिरिक्त और कोई वस्तु नही है, उनका श्रद्धान भी अब पुराना हो चला है और वे इस श्रद्धान को छोड़ते जाते हैं। अब उनका यह विश्वास हो चला है कि मनुष्य अपने शरीर से उच्चतर है, अर्थात् मनुष्य में शरीर से बढ़ कर भी कोई वस्तु है और उसका शरीर वही है जो वह अपनी मानसिक शक्ति से बनाता है । दूसरे शब्दों में शरीर पर मनुष्य के मानसिक विचारों का भारी प्रभाव पड़ता है। अब लोग इस विश्वास को छोड़ते जाते है कि अमुक मनुष्य को अजीर्ण है, इस कारण वह उदास और अप्रसन्न रहता है किन्तु इसके विपरीत यह विश्वास करते जाते हैं कि अमुक मनुष्य को इस कारण से अजीर्ण है कि वह उदास और अप्रसन्न रहता है और भविष्य में एक ऐसा समय आने वाला है कि जब सब को यह बात ज्ञात हो जायगी कि जितने भी रोग हैं उन

सब का कारण मनुष्य का मन है, अर्थात भिन्न भिन्न मानसिक अवस्थाओं के कारण ही मनुष्य भिन्न भिन्न रोगों मे ग्रसित रहते हैं।

दुनिया में ऐसी कोई बुराई या बीमारी नही है कि जो मन से पैदा न हुई हो। हर एक बुराई और बीमारी का कारण मन है। रोग, शोक, दुःख और संताप का सम्बन्ध सांसारिक नियमो से नही है और न उनका पृथक् अस्तित्व ही है, वे सब इस कारण से पैदा होते है कि हम पदार्थों के वा तविक संबन्ध से अपरिचित हैं।

कहा जाता है कि भारतवर्ष में किसी समय में ऐसे तत्व ज्ञानी रहा करते थे कि जो ऐसी सादगी और पवित्रता का जीवन व्यतीत करते थे कि उनके कारण उनकी आयु साधारण-तया डेढ़ सौ वर्ष की हुवा करती थी और बीमार पड़ना उनके लिये असभ्य और अपमान का कारण समझा जाता था, कारण कि उससे ज्ञात होता था कि उन्होंने प्राकृतिक नियमो की अवज्ञा की है।

जितनी जल्दी हमें इस बात का अनुभव और ज्ञान हो जायगा कि बीमारी इस कारण से नही आई है कि ईश्वर ने क्रोध में आकर हमको अनुचित दण्ड दिया है, उतनी ही जल्दी हम स्वास्थ्य के पथ पर लग जायेगे। बीमारी उन्ही लोगों को आती है जो बीमारी को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और जिनके मन और शरीर बीमारी को ग्रहण करते है। उन लोगों

से बीमारी कोसों दूर भागती है जिनका दृढ़, पवित्र और प्रबल विचार स्वास्थ्यप्रद अवस्था उत्पन्न करता है।

यदि तुम क्रोध, मान मोया, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष अथवा अन्य किसी वासना के आधीन रहते हो और फिर इस बात की आशा करते हो कि तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा रहे, तो तुम निश्चय से असम्भव बात की आशा करते हो, ऐसा कदापि नही हो सकता। कारण कि तुम तो निरन्तर अपने मन में बीमारी के बीज बो रहे हो। बुद्धिमान मनुष्य ऐसी अप्रिय मानसिक अवस्थायें गंदे नाले और उस मकान से भी अधिक भयकर हैं कि जिसमें प्लेग या हैज़ा फैल रहा हो।

यदि तुम शारीरिक व्याधियों से बचे रहना और पूर्ण रूप से स्वास्थ्य लाभ करना चाहते हो, तो अपने मन को निश्चित रक्खो और अपने विचारों को एक ओर लगाओ। हर्ष और आनन्द के विचार सोचो प्रेम और वात्सल्य के भाव अपने मन में लाओ और नेकनियती का अपनी नस नस में असर होने दो। फिर तुम्हे किसी औषधि की ज़रूरत नही रहेगी। अपने मन से ईर्ष्या, द्वेष, भय, शंका, चिंता और स्वार्थ के विचारों को एकदम निकाल डालो, तुम्हारी अजीर्ण और मंदाग्नी आदि की तमाम शिकायते तत्काल दूर हो जायेगी, परन्तु यदि तुम अपनी हट से इन दुर्वासनाओ को अपने मन से न निकालोगे तो फिर इस बात की शिकायत मत करना कि तुम्हारा शरीर व्याधियो मे ग्रसित है।

हम एक कहानी सुनाते १। उससे आप को यह बात स्पष्ट प्रकट हो जाएगी कि मानसिक विचारों और वासनाओं का शारीरिक अवस्थाओं से बड़ा घनीष्ट सम्बन्ध है। एक मनुष्य किसी रोग में ग्रसित था। रोग सख्त था। उसने कई हकीमों का इलाज किया, परन्तु कुछ भी लाभ नही हुआ। तब वह ऐसे स्थानो पर गया जहां पर जलवायु रोगनाशक समझा जाता था, परन्तु वहां जाने से भी उसे कुछ लाभ नही हुआ उसका रोग ज्यों का त्यों बना रहा। एक रात को उसने यह स्वप्न देखा कि एक देव ने उसके पास आकर पूछा कि क्या तूने सर्व प्रकार के इलाज कर लिये? उसने उत्तर दिया, हां, मैंने सर्व प्रकार के इलाज कर लिये। इस पर देव ने कहा, अच्छा मेरे साथ आ, मैं तुझे पानी का चश्मा दिखाऊंगा जिसे तूने आज तक नही देखा है। वह बेचारा उसके पीछे २ हो लिया देव उसे पानी के एक साफ सुथरे चश्मे पर ले गया और बोला, ले इस पानी में डुबकी लगा। तेरा सारा रोग जाता रहेगा। यह कह कर देव अदृश्य हो गया। रोगी ने पानी मे डुबकी लगाई और पानी से बाहर निकलते ही उसने देखा कि उसका सारा रोग जाता रहा। इसके साथ ही उसने चश्मे पर त्याग, शब्द को लिखा हुआ देखा। इतने मे ही उसकी आंख खुल गई और जो स्वप्न उसने देखा था उसके पूरे पूरे अर्थ उसकी समझ मे आ गए। विचार करने से उसे मालूम हुआ कि वह अब तक एक पाप का भागी बन रहा है। उसी कारण से रोग ने उसका पीछा नही छोड़ा। उसने अपने जी में पश्चात्ताप किया और तुरन्त प्रतिज्ञा ले ली कि मैं अब से इसका जीते जी त्याग करता हूं। उसने वास्तव में अपनी प्रतिज्ञा का

पालन किया और उसी दिन से उसका रोग कम होने लगा, यहाँ तक कि थोड़े ही दिनों के बाद वह बिलकुल अच्छा हो गया ।

बहुत से लोगों का यह विश्वास होता है कि अधिक कार्य करने से उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया है। ऐसी बहुत सी अव स्थानों में प्रायः स्वास्थ्य इस कारण बिगड़ जाता है कि लोग अपनी मूर्खता से अपनी शक्ति को नष्ट कर देते हैं। यदि तुम अपने स्वास्थ्य को बनाये रखना चाहते हो तो तुम्हें शांति चित्त होकर काम करना चाहिये। चिंता करना, अथवा घबड़ा जाना, अथवा सदा बिंदी की चिंदी निकालना और व्यर्थ में काम को बढ़ा लेना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है और रोग को स्वयमेव बुलाना है। काम चाहे शारीरिक हो चाहे मानसिक सदा उपयोगी और स्वास्थ्यप्रद होता है। जो मनुष्य भय और चिंता से मुक्त होकर और अपने मन को सर्व वस्तुओं से हटा कर केवल जो काम सामने है, उसकी ओर लगाता है, और जम कर शांति से काम करता है, वह उस मनुष्य की अपेक्षा जो सदा चिंतित रहता है केवल अधिक काम ही नहीं करेगा, किंतु अपने स्वास्थ्य को भी सुरक्षित रख सकेगा। इसके विपरीत जो मनुष्य निरन्तर भय और चिंता ग्रसित रहता है, उसका स्वास्थ्य शीघ्र ही बिगड़ जाता है।

स्वास्थ्य और सफलता दोनो मे कार्य कारण का सम्बन्ध है। अर्थात् जिस मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा है, उसे अवश्य सफलता होगी, कारण कि इन इन दोनों बातों का विचार रूपी जगत् में पारस्परिक संबन्ध है और वह सम्बन्ध कदापि टूट नही सकता। जिस प्रकार मानसिक अवस्था के उत्तम होने

से मनुष्य की शारीरिक अवस्था उत्तम होती है उसी प्रकार मन के द्वारा मनुष्य अपने कार्यों मे सफलता प्राप्त कर सकता है। अपने विचारो को उत्तम रीति से तरतीव दो, तुम्हारा जीवन भी उत्तम ही हो जायगा। यदि तुम अपनी कषायों और वासनाओं की भयकर लहरों पर शांति का तेल डालो अर्थात् शाति धारण करो, तो दुर्भाग्य और विपत्ति की आंधियां चाहे वह कितने ही ज़ोर से चलें तुम्हारी आत्मिक नौका में जब कि वह जीवन रूपी समुद्र में चल रही है, किसी प्रकार की हल चल पैदा नही कर सकती, और यदि उस नौका का नाविक दृढ़ विश्वासी और प्रसन्न चित्त मनुष्य हो तो नौका सीधे बेखटके चली जायगी और विपत्तियों से निकल कर अपने अभीष्ट स्थान पर सुरक्षित पहुँच सकेगी। परन्तु हां, यदि नाविक दृढ विश्वासी और प्रसन्न चित्त न हो तो नौका का विपत्तियों से बचना कठिन है। विश्वास के बल से प्रत्येक कार्य की पूर्ति हो सकती है। ईश्वर पर विश्वास रखना, ईश्वरीय नियम पर विश्वास करना, अपने कार्य पर विश्वास करना तथा अपनी शक्ति पर विश्वास करना, सफलता प्राप्त करने का गुर है। अब प्रश्न यह है कि विश्वास किसे कहते हैं? प्रत्येक दशा में अपने मन की सर्वोच्च भावनाओं से काम लेना अपने शुद्ध अन्तःकरण पर श्रद्धान करना और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये निर्भय होकर शांति से उद्योग करना और इस बात का निश्चय करना कि भविष्य में हमारे प्रत्येक विचार और प्रत्येक कार्य का हमें बदला मिलेगा और दुनिया के नियमों में भूल नहीं हो सकती, जो कुछ हमारा है, उसका एक एक कण हमें मिलेगा। इसी का नाम सच्चा विश्वास है।

ऐसे विश्वास के बल से सर्व प्रकार के संदेह दूर हो जाते हैं, कठिनाइयों के पहाड़ चूर २ हो जाते हैं और सम्यक् श्रद्धान युक्त आत्मा निःशङ्क चली जाती है। अतएव पाठक गण, प्रत्येक वस्तु को छोड़ कर सब से प्रथम इस निःशङ्क श्रद्धान और अटल विश्वास को प्राप्त करने का उद्योग करो, कारण कि इस प्रकार का श्रद्धान मनुष्य को सुख, सफलता और शक्ति के प्रदान करने में और उसके जीवन को सर्व प्रकार के दुःखों से बचाने में और उच्चतर बनाने में जादू का काम देगा। इस प्रकार के सम्यक् श्रद्धान पर जो इमारत बनाई जाएगी, वह स्थाई होगी और दृढ होगी। ईंट और पत्थरों से बनी हुई इमारतों की अपेक्षा वह कहीं अधिक उत्तम होगी, कारण कि वे समय पाकर नष्ट होजाती हैं, परन्तु यह इमारत कभी नष्ट नहीं होगी। चाहे तुम दुःख और विपत्ति से ग्रसित हो, चाहे हर्ष और आनन्द के शिखर पर आरूढ़ हो, प्रत्येक अवस्था में इस श्रद्धान पर अटल जमे रहो, इसी को अपना एक मात्र अवलम्ब समझो और इसी की नित्य, अविनाशी दृढ नीव पर अपना पैर जमा कर रक्खो। यदि तुम इस श्रद्धान पर अविचल रूप से जमे रहोगे तो तुम में ऐसा आध्यात्मिक बल आजाएगा कि तुम पाप और बुराई की शक्तियों को कॉचके खिलौने की तरह चकनाचूर कर दोगे और तुम्हे ऐसी सफलता प्राप्त होगी कि वह उस मनुष्य को स्वप्न में भी नहीं आ सकती कि जो केवल सांसारिक धन सम्पदा की अभिलाषा रखता है। यदि तुम्हें सम्यक् श्रद्धान है और किसी प्रकार की शका या संदेह नही है तो तुम्हें केवल वही नहीं मिलेगा कि जिस का ऊपर उल्लेख किया गया है, किंतु तुम्हारी शक्ति यहाँ तक

वढ़ जाएगी यदि तुम किसी पहाड़ से भी कहोगे कि यहाँ से हट जा और टूट कर समुद्र में गिर जा, तो यह भी संभव है।

इस समय भी ऐसे स्त्री पुरुष मौजूद हैं कि जिन्होंने इस सम्यक् श्रद्धान को भली भाँति समझ लिया है और जो रात दिन इसी में और इसी के द्वारा जीवन व्यतीत करते हैं तथा जिन्हों ने इसकी वहुत कुछ परीक्षा कर ली है। उसी का यह परिणाम हुआ है कि उन्होंने शांति और विभव प्राप्त किया है। उन के केवल मुँह से शब्द निकालने की देर थी कि दुःख शोक, विपत्ति, निराशा और मानसिक वा शारीरिक वेदना के पहाड़ उनके आगे से हट गए हैं और विस्मृति के समुद्र में डूव गए हैं।

यदि तुम्हें इस प्रकार का दृढ़ श्रद्धान है तो तुम्हें अपनी भावी सफलता या असफलता की चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। तुम शांति और आनंद के साथ अपने काम को किये जाओ और यह जान लो कि सद्विचारों और सद्कार्यों से अवश्य शुभ परिणाम निकलेंगे।

मैं एक स्त्री को जानता हूं कि जिसे अनेक प्रकार के सुख प्राप्त हैं। थोड़े दिन हुए मेरे एक मित्र ने उससे कहा कि अहा, तुम कैसी भाग्यवान् वो। केवल तुम्हें इच्छा करने की देर रहती है। इच्छा करते ही तुम्हे वस्तु की प्राप्ति हो जाती है। निःसन्देह देखने में तो ऐसा ही मालूम होता है, परन्तु वास्तव में जो सुख उसे प्राप्त हैं वह सव उसके मानसिक सुख का परिणाम है कि जिसके लिये वह शुरू से उद्योग

कर रही है। जब से उसे ज्ञात हुआ है, वह बराबर अपने मन को सधाने और अपनी आत्मा को पवित्र करने के प्रयत्न में लगी हुई है। केवल चाहने से या किसी चीज़ की इच्छा करने से तो सिवाय निराशा के और कुछ नही मिलता। हां यदि कुछ मिलता है तो उत्तम जीवन व्यतीत करने से, उत्तम जीवन का ही कुछ प्रभाव पड़ता है। मूर्ख लोग केवल इच्छा करते रहते है और जब उन्हे कुछ नहीं मिलता तो वे बड़बड़ाने लगते है, परन्तु बुद्धिमान पुरुष काम करते हैं और फल की प्रतीक्षा करते हैं। उक्त स्त्री ने जो कुछ भी प्राप्त किया था, वह सब अपने उद्योग द्वारा। उसने अपने अंतरंग को सुधारा था, अपने मन को सधाया था और अपनी आत्मा को विशुद्ध बनाया था। उसने अपनी आत्मा के आसाधारण और अदृश्य हाथों से आशा, विश्वास, प्रेम, आनन्द और भक्ति के बहुमूल्य हीरों से प्रकाश का एक सुन्दर और रमणीक मन्दिर बनाया था जिसकी प्रकाशमान किरणें सदैव उसके चहुँ ओर फैली रहती थी। वे किरणे उसकी आंखों में चमकती थीं, उसकी आकृति से प्रकट होती थी, उस के शब्दों में थर२ करती थीं और जो लोग उस के सामने आते थे उन पर उन किरनों का जादू जैसा असर पड़ता था और वे सब उसके भक्त होते जाते थे।

जैसा उक्त स्त्री का हाल है, वैसा ही तुम्हारा है। तुम्हारी सफलता, तुम्हारी असफलता, तुम्हारा प्रभाव और तुम्हारे जीवन के सपूर्ण कार्य तुम्हारी अवस्था में इस बात के साक्षी है कि तुम्हारे मन में किस प्रकार के विचारों का असर है यदि तुम प्रेम, पवित्रता और आनद के विचारो को प्रकाशित करोगे तो तुम्हें सुख और ऐश्वर्य प्राप्त होगा और शांति मिलेगी।

इसके विपरीत यदि तुम घृणा, द्वेष, अपवित्रता और अप्रसन्नता के विचारों का प्रकाश करोगे तो सब कोई तुम्हारी निंदा करेंगे और तुम सदैव भय और चिंता में ग्रसित रहोगे। तुम स्वयं अपने अच्छे वा बुरे भाग्य के बनाने वाले हो। प्रतिक्षण तुम्ही से ऐसे भाव वा विचार प्रकट होते रहते हैं कि जिन से तुम्हारा जीवन सुधरता है या बिगड़ता है। अपने हृदय को उदार, निःस्वार्थ और प्रेममय बनाओ, उससे तुम्हारा प्रभाव अधिक होगा और तुम्हें स्थाई सफलता प्राप्त होगी, चाहे, तुम्हारे पास धन कुछ भी न हो। परन्तु इसके विपरीत यदि तुम अपने को स्वार्थ की चार दिवारी के भीतर बन्द रक्खोगे तो चाहे तुम लखपति वा क्रोड़पति क्यों न हो, तुम्हारा प्रभाव कुछ भी नही होगा और न तुम्हें कुछ सफलता प्राप्त होगी।

अतएव तुम अपने में इस पवित्र और निःस्वार्थ भाव को उत्पन्न करो और विश्वास और पवित्रता से काम करने के अतिरिक्त अपने शुभ संकल्प में दृढ रहो। ऐसा करने पर तुम्हारे मन में ऐसी बात उपजेंगी और ऐसे भाव प्रकट होंगे कि जिनसे तुम्हें केवल उत्तम स्वास्थ्य और स्थाई सफलता ही प्राप्त नहीं होगी, किन्तु तुम्हारा बल और प्रभाव भी बढेगा।

चाहे तुम अपनी वर्तमान अवस्था से अप्रसन्न हो और तुम्हारा जी काम में न लगता हो, तो भी तुम जहां तक हो सके अपने कर्तव्य का श्रम और साहस से पालन किये जाओ और अपने मन मे यह विश्वास रक्खो कि इससे अच्छी अवस्था और अच्छे अवसर तुम्हारी वाट जोह रहे है। सदा नई निकलने वाली सूरतों की जोह मे रहो कि जिससे जब

कभी अवसर मिले और नया मार्ग दिखलाई दे, तो झट तुम उस पर लग जाओ और बुद्धिमानी, सावधानी और दूरदर्शिता से काम करने के लिये तैयार होकर इस नये काम में तन मन से उद्योग करने लगो।

चाहे तुम्हारा काम कुछ हो, तुम उसको तन मन धन से एकाग्र चित्त होकर करो और अपनी ओर से कोई भी कसर उठा न रक्खो। यदि तुम छोटे छोटे कामों को पूरी तौर से कर लोगे तो बड़े बड़े काम भी अवश्य कर सकोगे। इस बात का सदैव ध्यान रक्खो कि धीरे धीरे उन्नति करते हुए ऊपर चढ़ो। ऐसा करने से तुम कदापि नीचे नहीं गिर सकोगे। वास्तविक शक्ति के प्राप्त करने का यही मार्ग है निरन्तर इस बात का स्मरण रक्खो कि तुम अपनी योग्यता से कैसी उत्त-मता से काम ले सकते हो और उसे जब चाहे किसी काम में लगा सकते हो। मूर्ख मनुष्य अपनी सम्पूर्ण मानसिक और आत्मिक शक्ति को छिछोरपन, व्यर्थ की बकवाद, और स्वार्थ-युक्त बातों में नष्ट कर देते हैं और साथ में बुरे कामों के करने से अपनी शारीरिक शक्ति को भी नष्ट करते रहते हैं।

यदि तुम प्रबल शक्ति प्राप्त करना चाहते हो तो तुम्हें शांति धैर्य और गम्भीरता से काम लेना चाहिये। तुम्हें स्वय अपने पैरों से खड़ा होना सीखना चाहिये। दूसरों की सहायता के भूखे मत रहो, सपूर्ण शक्ति स्थिरता और दृढता से सम्बन्ध रखती है। देखो चट्टान, पहाड़ और बलूत के पेड़ से जिसने बड़ी बड़ी आंधियों को सहन कर लिया है शक्ति प्रकट होती है, कारण कि इनमें से हरएक भारी और बलवान् है और अपने

स्थान पर इस प्रकार स्थिर है कि कोई हिला नहीं सकता। परन्तु इसके विपरीत उडती हुई रेत, झुकती हुई टहनी, और हिलती हुई किल्क (नरकुल) से निर्बलता प्रकट होती है कारण कि ये सब हिलने वाली चीजें हैं और विरोधी शक्ति का मुकाबला नही कर सकती और जब अपने साथियों से पृथक् हो जाती हैं उस समय किसी भी काम की नही रहती अर्थात् रेत का एक कण पेड की एक टहनी और किल्क का एक सरकंडा स्वयमेव कुछ भी शक्ति नहीं रखता। वास्तव में वही मनुष्य बलवान है कि जो अपने साथियों के किसी न किसी प्रकार की वासना में ग्रसित हो जाने पर भी स्वयं शांत गंभीर और स्थिर रहता है।

वही मनुष्य दूसरों पर शासन कर सकता है और उनको अपने वश में रख सकता है कि जिसने स्वयं अपने को वश में कर लिया हो। जो लोग सिड़ी और दीवाने हैं, कायर और डरपोक हैं और विचारशून्य हैं और जिनमें बुद्धि और गम्भीरता नहीं है, उनको चाहिये कि वे और लोगों के साथ रहें नहीं तो निर्बल और असहाय होकर गिर पड़ेंगे, परन्तु जो मनुष्य शांत, गम्भीर निर्भीक, बुद्धिमान् और दूरदर्शी हैं, उन्हें चाहिये कि वे अकेले जंगल, और पहाड़ों में चले जांय। ईश्वर उनकी शक्ति को और भी अधिक बढा देगा और वे उन भयकर मानसिक लहरों और भॅवर से जो मनुष्य को विपत्ति के समुद्र में गिरा देती हैं, बचकर निकल जाएँगे।

वासना में शक्ति नहीं है। इससे तो शक्ति का दुरूपयोग होता है और विनाश भी होता है। वासना एक तेज़ आधी के

समान है कि जो मजबूत चट्टानो को दीवार से जोर से टक्करें मारती रहती है और शक्ति चट्टान के सदृश है कि जो आंधी में चुपचाप और निष्क्रिय रहती है।(एक बात मार्टिन लूथर को उसके मित्रों ने वर्म्स नामक स्थान में जाने से मना किया और उसका कारण यह था, कि उन्हें इस बात का भय था कि यदि वह वहां पर जायगा तो मारा जायगा। इसके उत्तर में लूथर ने कहा कि चाहे वहां पर मेरे कितने ही शत्रु हों, परन्तु वहां मैं अवश्य जाऊंगा। इसका नाम सच्ची भक्ति है। इसी प्रकार जब बेंजमिन डिजरेली पहले पहल पार्लियामेंट में वक्तृता देने के लिये खड़े हुए और बोल न सके और उसके कारण पार्लियामेंट में उनकी हसी हुई, तो उस समय जो कुछ उन्होने कहा था उससे उनकी वास्तविक अन्तरग शक्ति का प्रकाश होता है। उनके शब्द ये थे कि "एक दिन ऐसा आयगा कि जब तुम मेरी वक्तृता को ध्यान से सुनना अपने लिए अभिमान का कारण समझोगे")

(एक नवयुवक के विषय में ज्ञात है कि वह लगातार विपत्तियो पर विपत्तियां सहता था और उसे प्रत्येक कार्य में असफलता होती थी। उसके मित्र उसे कह कह कर चिढ़ाते थे कि अब तुम उद्योग करना छोड़ दो, तुम्हें सफलता नही हो सकती इसके उत्तर में नवयुवक कहता था कि वह समय दूर नही है किन्तु बहुत ही निकट है, कि जब तुम मेरी सफलता और सौभाग्य पर आश्चर्य करोगे। वास्तव में उसने सिद्ध कर दिया कि उसके भीतर वह गुप्त और अजेय शक्ति विद्यमान है कि जिसके कारण उसने अगणित कठिनाईयों पर विजय प्राप्त की और उसे अपने जीवन में पूर्ण सफलता हुई।

यदि तुम में यह शक्ति नहीं है तो तुम अभ्यास से इसको प्राप्त कर सकते हो। जब से शक्ति का प्रारंभ होता है तभी से बुद्धिमानी का प्रारंभ होता है। तुम्हें चाहिये कि पहले तुम उन छोटी छोटी बातों को अपने वश में करो कि जिनके तुम स्वयं अभी तक अपनी इच्छा से वश में हो रहे हो। खिलखिला कर मुँह फाड़ कर हँसना, व्यर्थ की बातें करना, दूसरों की हँसी उड़ाना और केवल हास्य के लिये हँसी ठट्ठा करना, इन सब बातों को छोड़ना चाहिये। इन से समय को नष्ट करने के सिवाय और कोई लाभ नहीं है। इसी लिये सेंटपाल ने एशिया माइनर में एफीसिज़ के लोगों को मूर्खता की बातें न करने और हँसी ठट्ठा न करने का उपदेश दिया था। उन्होंने कहा था कि ऐसा करने से संपूर्ण आत्मिक बल और जीवन नष्ट हो जाता है। जितना तुम अपनी मानसिक शक्तियों को इस प्रकार नष्ट होने से बचाओगे, उतना ही तुम्हें इस बात का ज्ञान होगा कि वास्तविक शक्ति क्या है। फिर तुम अपनी उन इच्छाओं और वासनाओं पर विजय प्राप्त कर लोगे कि जिन्होंने तुम्हारी आत्मा को अपना दास बना रक्खा है और जो तुम्हारी उन्नति में बाधक हैं। तत्पश्चात् तुम स्पष्ट रूप से उन्नति कर सकोगे।

सब से बढ़ कर यह बात है, कि अपना एक उद्देश्य बताओ जो उत्तम और उपयोगी हो और उसकी पूर्ति करने में तन मन से लग जाओ। चाहे, कैसी ही विपत्ति आए और कैसी ही कठनाई उपस्थित हों, परन्तु, अपने निश्चित उद्देश्य से पीछे मत हटो। याद रक्खो, जिस मनुष्य का कोई निश्चित उद्देश्य नहीं होता, उसे किसी काम में भी सफलता नहीं हो सकती।

सीखने के लिये तो हर समय तैयार रहो, परन्तु मांगने के लिये कभी हाथ मत बढ़ाओ। अपने काम को अच्छी तरह समझ लो और स्वय काम करो। जितना तुम अपनी अन्तरात्मा के अनुसार काम करोगे और विवेक शक्ति से काम लोगे उतनी ही तुम्हें सफलता प्राप्त होगी और तुम उन्नति करते करते उच्च स्थान पर पहुँच जाओगे और तुम्हारे उदार विचारों के द्वारा जीवन का वास्तविक सौंदर्य और उद्देश्य तुम पर धीरे धीरे प्रगट हो जायेगा। अपने आप को विशुद्ध और पवित्र रखने स तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, सम्यक् श्रद्धान और दृढ़ विश्वास रखने से तुम्हे सफलता प्राप्त होगी और अपने मन को अपने वश में करने से तुम में बल और शक्ति आ जाएगी और जो कुछ भी तुम काम करोगे उसमें तुम्हारी जय होगी। यदि तुम अपनी इन्द्रियों के दास नही बनोगे, तो तुम ईश्वरीय नियम के अनुसार काम करोगे और इस दशा में जो कुछ भी तुम स्वास्थ्य या सफलता का लाभ करोगे वह स्थाई होगा, उसका कभी विनाश नही होगा और तुम्हारा बल और प्रभाव दिन दिन बढ़ता जायगा।

अतएव स्वास्थ्य का मूल साधन यह है कि अपने मन को अपने वश में करो और अपने हृदय को विशुद्ध बनाओ। सफलता के लिये दृढ विश्वास, सम्यक् श्रद्धान और निश्चित उद्देश्य रक्खो और शक्ति की प्राप्ति के लिये इस बात की आवश्यकता है कि दृढ सङ्कल्प करके इच्छा और वासना का काला मुंह कर दो।

९—सच्चे सुख का साधन।

संसार में जितनी लोगों को सुख की इच्छा है उतनी ही सुख की कमी है। कितने ही लोगों को धन की इच्छा है और उनका विश्वास है कि धन की प्राप्ति से सुख की प्राप्ति होगी। कितने ही धनवान् ऐसे हैं कि जिन्हें यद्यपि सर्व प्रकार के सुख साधन प्राप्त हैं, तथापि वे इस कारण से दुःखी हैं कि उनके पास कोई काम करने को नहीं है। वे रात दिन पलंग पर पड़े रहते हैं और इसी बात की चिंता में रहते हैं कि हाय! हमारे पास कोई काम करने को नहीं है। इस अपेक्षा वे बहुत से निर्धन मनुष्यों से भी गए बीते हैं। यदि हम इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार करें तो इससे हमको इस महत्वपूर्ण सिद्धान्त का ज्ञान हो जाएगा कि सुख बाह्य वस्तुओं की प्राप्ति में नहीं है और न दुःख उनके अभाव में हैं, कारण कि यदि ऐसा होता तो हम निर्धन मनुष्यों को सदा दुःख में देखते और धनवानों को सुख में, परन्तु ऐसा नहीं है। कभी कभी तो सर्वथा इसके विपरीत देखने में आता है। कितने ही अभागे मनुष्य मैंने ऐसे देखे हैं कि जिनके पास यद्यपि धन सम्पदा की बाहुल्यता है तथापि दुःखी हैं और कितने

ही भाग्यवान् मनुष्य ऐसे भी देखने मे आए हैं कि जो यद्यपि अपना खर्च भी मुश्किल से चलाते है तथापि सदैव सुखी और प्रसन्न रहते हैं। कितने ही लोगो का जिन्होंने धन-सञ्चय किया है यह कथन है कि धन को हमने केवल अपने ही लाभ के लिये व्यय किया और उससे अपने को ही लाभ पहुँचाया, इस कारण हमारे जीवन का आनन्द जाता रहा और अब हम इतने प्रसन्न नहीं हैं जितने कि हम निर्धनता की अवस्था में होते।

अतएव अब प्रश्न यह है कि सुख क्या वस्तु है और वह किस प्रकार प्राप्त हो सकता है। क्या वह कोई क्षणिक और काल्पनिक वस्तु है और दुःख स्थाई और वास्तविक है?

इस प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार करने से ज्ञात होता है कि जिन लोगों ने ज्ञान मार्ग को ग्रहण कर लिया है, उनके अतिरिक्त जन साधारण का यह विश्वास है कि सुख इच्छाओं की पूर्ति में है। यह विश्वास प्रायः अज्ञानता के कारण उत्पन्न होता है और स्वार्थपरता के विचारो से निरन्तर बढ़ता रहता है। यही विश्वास संसार के दुखों का मूल है। इच्छा से यहाँ पर मेरा तात्पर्य केवल विषय-वासना से नही है, किन्तु इसका सम्बन्ध उच्च आध्यात्मिक साम्राज्य से भी है कि जहाँ पर अधिक प्रबल सूक्ष्म और गुप्त रूप से भीतर ही भीतर नष्ट करने वाली और हानि पहुँचाने वाली इच्छाएँ सभ्य और शिक्षित पुरुषों को अपना दास बना लेती हैं और उनको आत्मा की उस सुन्दरता और पवित्रता से वंचित कर देती है कि जिसका प्रकाश हर्ष और आनन्द का कारण है।

बहुत से मनुष्य इस बात को स्वीकार करेंगे कि संसार में जितने भी दुःख हैं, उन सबका कारण स्वार्थ है, परन्तु उन्हें यह आत्मघाती भ्रम हो रहा है कि यह स्वार्थ उनका नहीं है किंतु दूसरो का है। जब तुम इस बात को स्वीकार करने लगोगे कि तुम्हारे दुःख का कारण तुम्हारा ही स्वार्थ है, तब तक स्वर्ग के द्वार से बहुत दूर नहीं रहोगे, परन्तु जब तक तुम्हे यह विश्वास है कि दूसरों के स्वार्थ के कारण तुम्हें दुख उठाना पड़ रहा है, तब तक तुम अपने ही बनाए हुए नरकागार में पडे रहोगे।

सच्चे सुख की अवस्था वह अवस्था है कि जिसे आनन्द और शांति कहते हैं और जिसमें किसी प्रकार की इच्छा नहीं होती। इच्छाओं की पूर्ति से जो सन्तोष वा सुख होता है वह क्षणिक और काल्पनिक होता है और उससे इच्छा की पूर्ति की और अधिक चाह होती है। समुद्र के समान इच्छा की कोई थाह या सीमा नहीं होती। जितनी हम उसकी पूर्ति करते जाते है उतनी ही वह अधिक बढती जाती है। इच्छा अपने सेवकों से सदा सेवा चाहती रहती है। उसकी कभी तृप्ति नहीं होती। यहां तक कि शारीरिक व्याधियां और मानसिक वेदनाएं उनको आ दबाती हैं। और वे दुख और विपत्ति की पवित्र करने वाली अग्नि में जा पडते हैं। इच्छा एक नरकागार है जिसमें सर्व प्रकार के दुख और कष्ट आकर जमा हो गये हैं इच्छाओं के त्याग करने से ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है और वहां के यात्रियों को सर्व प्रकार के सुख उपलब्ध हैं।

स्वर्ग और नरक अंतरंग अवस्थाएं हैं। यदि तुम स्वार्थ-साधन में लगोगे और इन्द्रियों के दास बने रहोगे, तो तुम

नरक में गिरोगे, परन्तु यदि तुम स्वार्थ को त्याग कर ज्ञान को उस अवस्था को प्राप्त करोगे कि जिसमें मन और इन्द्रिय को बिलकुल वश में कर लिया जाता है और कषाय और वासना सर्वथा मन्द हो जाती है तो तुम स्वर्ग में प्रवेश करोगे। स्वार्थ में मनुष्य अन्धा हो जाता है। उसमें विचार और विवेक बिलकुल नही रहता। उसे वस्तु का यथार्थ ज्ञान भी नही होता। इसी लिये वह सदैव दुःख और आपत्ति में ग्रसित रहता है। सम्यक्दर्शन, ज्ञान और निष्पक्ष भाव इन सब बातों का सम्बन्ध ईश्वरीय अवस्था से है। जितना तुम इस ईश्वरीय ज्ञान को समझ सकोगे उतना ही तुम्हें इस बात का बोध हो जाएगा कि यथार्थ में सुख किसका नाम है। जब तक तुम स्वार्थ के वशीभूत हुए अपनी ही इच्छाओं की पूर्ति करने में लगे रहोगे तब तक तुम सुख से वञ्चित रहोगे और अपने लिये दुःख और विपत्ति के बीज बोते रहोगे। परन्तु जितना तुम दूसरों की सेवा करने और उनको लाभ पहुचाने के उद्योग, में लगोगे उतना ही तुम्हें सुख मिलेगा और तुम हर्ष और आनन्द के फल प्राप्त करोगे।

यदि तुम स्वार्थ के वश में रहोगे तो दुख उठाओगे। परन्तु यदि स्वार्थ को त्याग दोगे, तो शान्ति प्राप्त करोगे। स्वार्थ से प्रत्येक वस्तु की इच्छा करने से केवल हर्ष और आनन्द का ही नाश नही होता, किन्तु हर्ष और आनन्द के साधन भी नष्ट हो जाते हैं। देखो पेटू और लालची आदमी शुरु में किस प्रकार अपनी मरी हुई भूख को तेज़ करने के लिये नई नई मजेदार चीजों की तलाश में रहता है, परन्तु पीछे से कैसा बोझ और बीमार हो जाता

है कि उसे कोई चीज भी अच्छी नहीं लगती। इसके विपरीत जिस आदमी ने अपनी भूख को अपने वश कर लिया है और जो मजेदार चीजोंकी तलाश में तो क्या रहता उनका विचार तक भी नहीं करता है, वह सादा भोजन करके खुश होता है जो लोग स्वार्थ दृष्टि से देख कर यह विचार करते हैं कि सर्वोत्तम सुख इच्छाओं की पूर्ति में है। जब उन्हें उस सुख की प्राप्ति हो जाती है तो मालूम होता है वह सुख नहीं किन्तु सुखाभास है और दुःख का पञ्जर है। वास्तव में यह कथन सत्य है कि जो मनुष्य स्वार्थ साधन मे लिप्त है उसका जीवन नष्ट हो जायगा, किन्तु जो मनुष्य दूसरों को सेवा करने में तन्मय हो जाता है और अपने आप को बिलकुल भुला देता है, यथार्थ में उसे ही जीवन का आनन्द प्राप्त होता है। स्थाई सुख तुम्हें उस समय प्राप्त होगा कि जब तुम स्वार्थान्ध होकर किसी वस्तु की इच्छा करनी छोड दोगे और निःस्वार्थ भाव को अपने मन में स्थान दोगे। जब तुम इस क्षणिक और विनाशीक वस्तु को सर्वथा भूल जाओगे कि तुम्हे इतनी प्यारी है और जो एक दिन तुम से अवश्य छिन जाएगी, चाहे तुम उसे प्यार करो या न करो, तब तुम्हें ज्ञात होगा कि जिस चीज के छोड़ने में तुम्हे हानि मालूम होती है उसका छोड़ना तुम्हारे लिये बडा लाभदायक हुआ। लाभ की इच्छा से किसी वस्तु का त्याग करना, इससे बढ़ कर कोई धोका नही है और न इससे बढ़ कर कोई दुख या विरक्ति का कारण है, परन्तु किसी वस्तु का त्याग करना और स्वयं दुःख और कष्ट उठाना इसका नाम वास्तव मे जीवन का मार्ग है।

जो चीज़ें स्वयमेव नष्ट हो जाने वाली है क्या यह संभव है

कि उनमें मन लगा कर तुम वास्तविक सुख प्राप्त कर सकते हो कदापि नही । वास्तविक सुख तभी प्राप्त हो सकता है कि जब तुम उन वस्तुओ मे अपना मन लगाओ कि जो नित्य और स्थाई है और कभी नष्ट नही होंगी । अतएव तुम्हें चाहिये कि क्षणिक और विनाशिक वस्तुओं से अपने मन को हटा लो और उनकी कभी भूल कर भी इच्छा न करो । उस समय तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाएगा । जितना तुम स्वार्थ को छोड़ते जाओगे उतना ही तुम में प्रेम, पवित्रता, निःस्वार्थता, जीवमात्र के प्रति मैत्री भाव पैदा होता जायेगा और इसी प्रकार उन्नति करते करते तुम ब्रह्मज्ञान में लीन होजाओगे । उस समय जो तुम्हें सुख होगा वह नित्य और स्थाई होगा जो कभी नष्ट नही होगा ।

जिस मनुष्य के हृदय ने दूसरो के साथ प्रेम करने में और उन्हें लाभ पहुँचाने में अपने आप को बिलकुल भुला दिया है उसे केवल उच्च कोटि का सुख ही नही मिला किन्तु उसने नित्य और स्थिर जगत् में प्रवेश कर लिया है कारण कि उसे ब्रह्मज्ञान और ईश्वरानुभव हो गया है । अपने जीवन पर एक दृष्टि डालो । तुम्हे ज्ञात हो जायगा कि तुम्हारे लिये सब से अधिक सुख के वे समय थे कि जिनमें तुमने किसी के लिये दया के शब्द अपने मुख से निकाले हों, अथवा परोपकार के कार्य किये हों अथवा दूसरों के हितार्थ अपने स्वार्थ की आहुति दी हो।

आत्मिक दृष्टि से सुख और समता पर्यायवाची शब्द हैं। समता ईश्वरीय नियम का एक रूप है जिसका आत्मिक प्रकाश प्रेम है। स्वार्थ घृणित और निंदित है। स्वार्थी मनुष्य ईश्वरीय

नियम के प्रतिकूल चलता है। जितना हम स्वार्थ का त्याग करते हैं और सार्वप्रेम का अनुभव करते हैं, उतना ही हम ईश्वरीय गुणों का अनुकरण करते हैं। इसी का नाम सच्चा सुख है।

संसार में सर्वत्र स्त्री पुरुष सुख की जोह में अंधाधुन्द मारे मारे फिरते हैं, परन्तु उन्हे कहीं भी सुख की प्राप्ति नही होती वास्तव में उस समय तक सुख की प्राप्ति होना नितांत असम्भव है कि जब तक वे इस बात का अनुभव न करेंगे कि सुख उनके भीतर और उनके चहुँ ओर विद्यमान है। ससार में कोई भी ऐसे स्थान नही हैं कि जहां सुख न हो। बात केवल इतनी ही है कि लोग स्वार्थ के वशीभूत होकर उसको ढूंडते हैं, इसीलिये वह उन्हें नही मिल सकता और वे उससे वञ्चित रहते हैं।

देखिये, एक कवि ने सच्चे सुख का रहस्य निम्न लिखित शब्दों में कैसी सुंदरता से वर्णन किया है :—

"मैं सुख को प्राप्त करने के लिये वलूत के ऊँचे ऊंचे पेड़ों और लहलहाती हुई इश्क पेचा के पास से निकलता हुआ उसकेपीछे पीछे दौड़ा परन्तु मैं उसे पकड न सका। वह तेजी से निकल गया। मैंने पहाड़ों और घाटियों पर होकर खेतों और बागीचों में से निकल कर हरे भरे मैदानों में उसका पीछा किया। जोरों से बहती हुई नदी को शीघ्रता से पार करके मैं पहाड़ों के ऊंचे ऊँचे शिखरों पर चढ़ गया। मैं सर्वत्र जल थल घूमा, परन्तु सुख मेरे हाथ नहीं आया। वह सदा मुझसे दूर रहा। जब मैं चलता चलता थक गया और बेसुध हो गया तब मैंने लाचार होकर उसका पीछा करनाछोडदिया और नदीकेएक

सूखे किनारे पर ज़रा दम लेने के लिये बैठ गया। इतने में एक मनुष्य मेरे पास आया और उसने मुझसे कुछ खाने को मांगा उसे आये हुए देर नहीं हुई थी कि एक दूसरा मनुष्य आन पहुँचा और उसने कुछ भीख मांगी। मैंने भूखे को रोटी और मंगते को कुछ पैसे दिये। इन दोनों मनुष्यों के जाते ही दो मनुष्य और आ पहुँचे। एक प्रेम और सहानुभूति का इच्छुक था और दूसरा आराम का। मैंने दोनों का हृदय से स्वागत किया और दोनों की आवश्यकताओं की यथाशक्ति पूर्ति की। इतने में ही क्या देखता हूं कि सच्चा और उच्च कोटि का सुख ईश्वरीय रूप में स्वयमेव मेरे सामने आकर खड़ा हो गया और धीरे से कहने लगा कि मैं तेरा दास और किंकर हूँ।"

उक्त शब्दों से पता लगता है कि सच्चा सुख क्या वस्तु है और वह किस प्रकार प्राप्त होता है। और क्षणिक और काल्पनिक सुख की आहुति दे दो, फिर तुम नित्य और स्थाई सुख को प्राप्त कर लोगे। उस परिमित और संकुचित स्वार्थ को त्याग दो जो सम्पूर्ण वस्तुओं को अपने ही लाभ के लिये चाहता है। फिर तुम स्वर्गलोक में देवताओं के पास जा विराजोगे और तुम्हारे अंग अंग में सार्वप्रेम का गुण विकसित हो जाएगा। दूसरों का दुःख दूर करने में और उन्हें लाभ पहुँचाने में अपने आप को बिल्कुल भुला दो, फिर तुम्हें सम्पूर्ण दुखों से छुटकारा मिल जाएगा। एक विद्वान का कथन है कि मैंने तीन पग में स्वर्ग लोक में प्रवेश किया। पहला पग सद्विचार था, दूसरा सुवचन और तीसरा सच्चरित्र। इसी मार्ग का अनुकरण करके तुम भी स्वर्ग में प्रवेश कर सकते हो। यह स्वर्ग कहीं और

नहीं है । यहीं पर मौजूद है परन्तु उन्हीं लोगों को मिलता है जो निःस्वार्थ होकर काम करते हैं और वही लोग उसको जान सकते हैं जिनके मन शुद्ध हैं ।

यदि तुमने इस अपरिमित सुख को प्राप्त नहीं किया है तो तुम उसे इस प्रकार प्राप्त कर सकते हो कि सदा अपने सामने निःस्वार्थ प्रेम का उच्च आदर्श रक्खो और उसको प्राप्त करने की आकांक्षा करते रहो । इस प्रकार की आकांक्षा उच्च आकांक्षा है । इसमें आत्मा ईश्वर की ओर आकर्षित होती है जहां उसको नित्य और स्थाई सुख की प्राप्ति होती है । इस प्रकार की उच्च आकांक्षा से वासना की नाशक शक्तियां ईश्वरीय स्थाई शक्ति में परिवर्तित हो जाती हैं । उच्च आकांक्षा करना मानों इच्छा और वासना के गोरखधंधों से निकल जाना है ।

जितना तुम स्वार्थपरता को छोड़ोगे और जितना तुम एक एक करके लोभ की जंजीरों को तोडोगे उतना ही तुम्हें त्याग के आनन्द का अनुभव होगा । उसी समय तुम्हें स्वार्थपरता और कृपणता के दुःखों का पता लगेगा । त्याग करने से यह तात्पर्य है कि कि दूसरों की तन मन धन से सेवा करना, उनसे प्रेम और सहानुभूति रखना और उन्हें अपने ज्ञान से लाभ पहुँचाना । जब तुम इस बात को अच्छी तरह से समझ जाओगे तब तुम्हें ज्ञात होगा कि लेने की अपेक्षा देना अधिक श्रेष्ठ है । परन्तु स्मरण रहे, देना मन से होना चाहिये । उसमें स्वार्थ की तनिक भी गंध न हो और न बदले की इच्छा हो । जो लोग पवित्र और निःस्वार्थ प्रेम से कोई वस्तु किसी को देते हैं, उनको सदैव सुख की प्राप्ति होती है ।

यदि देने के बाद तुम्हारे मन मे यह विचार हुआ कि लेने वाले ने तुम्हें धन्यवाद नही दिया और न तुम्हारी प्रशंसा की अथवा तुम्हारा नाम समाचार पत्रो में दातारों की सूचि में नही छपा तो जान लो कि तुमने केवल नाम की इच्छा से लोगो को दिखलाने के लिये और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये दिया था, पवित्र और निःस्वार्थ प्रेम के कारण नहीं दिया था। तुमने केवल इस इच्छा से दिया था कि उसके बदले में तुम्हे कुछ मिले और इसका नाम देना नहीं किंतु लेना है। यह दान नही है किन्तु व्यापार है। दान निःस्वार्थ होकर देना चाहिये। उसके बदले में कुछ मिले इसका विचार भी मन में न लाना चाहिये।

दूसरों की भलाई में अपने आप को सर्वथा भुला दो। तुम्हारे कामों में स्वार्थ की गंध भी नही होनी चाहिये यही सच्चे सुख का रहस्य है। इसी से अपरिमित सुख की प्राप्ति होती है। स्वार्थ से सदैव बचते रहो और इन्द्रिय निग्रह के पाठ को दृढ़ता के साथ सीखते रहो। इससे तुम उस अपरिमित सुख और असीम आनन्द को प्राप्त कर सकते हो, कि जिसका कभी नाश नही होगा।

७–सुख का अनुभव और उसकी प्राप्ति।

च्चे सुख का वही हृदय अनुभव कर सक्ता है कि जो प्रेम, पवित्रता, सत्य और उदारता से परिपूर्ण हो। जिसका हृदय इनसे शुन्य है उसे सुख का अनुभव नही हो सकता, कारण कि सुख का संवन्ध मन और हृदय से है। लालची आदमी चाहे क्रोड़पति हो जाए, किंतु सदा नीच, पतित और घृणित रहेगा और जब तक दुनिया में उससे अधिक धन वान् मनुष्य रहेंगे वह उन्हे देख कर अपने को निर्धन ही समझेगा; परंतु इसके विपरीत सच्चा ईमानदर और दयालु मनुष्य चाहे उसके पास धन संपदा कुछ भी नही हो, तो भी वह सदा सुखी रहेगा। यदि मनुष्य को संतोष नहीं है तो वह निर्धन है परन्तु जिसे संतोष है, वह धनवान् है, और जो मनुष्य उदार है अर्थात् जो कुछ उसके पास है उसे दूसरों के लिये व्यय करता है वह और भी अधिक धनवान् है।

जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि दुनिया में कैसी कैसी उत्तम वस्तुएं भरी हुई हैं और मनुष्य लोभ के वशीभूत होकर केवल कुछ रुपयों अथवा कुछ एकड़ ज़मीन को लेने की इच्छा करता है, तब हमें इस बात का भली भाँति ज्ञान हो जाता

है कि स्वार्थ मूर्खता और अज्ञानता का सूचक है। उसी समय हमें इस बात का भी ज्ञान हो जाता है कि स्वार्थपरता हमारे नाश का कारण है।

देखो, प्रकृति कैसी उदारता के साथ सब कुछ दे डालती है और फिर भी सब कुछ उसके पास रहता है, उसमें कुछ भी कमी नहीं आती। इसके विपरीत मनुष्य जो इतना लालची है कि प्रत्येक वस्तु को लेने की इच्छा करता है, अन्त में सब कुछ खो बैठता है।

अतएव यदि तुम श्रेय अर्थात् सच्चे सुख को प्राप्त करना चाहते हो तो इस विश्वास को अपने मन से निकाल डालो कि हमें भलाई के बदले बुराई मिलेगी। मुझे सच्चाई के सिद्धान्त पर अटल विश्वास है और मै उस सिद्धान्त के सामने और किसी सिद्धात को मानने के लिये तैयार नही हूँ। मुझे विश्वास है कि भलाई का परिणाम भलाई है और बुराई का परिणाम बुराई। यह कदापि नही हो सकता कि भलाई का परिणाम बुराई हो। ऐसा समझना भ्रम और अज्ञानता है।

प्रत्येक अवस्था में वह काम करो जिसे तुम ठीक समझते हो। ईश्वर पर और उसकी शक्ति पर जो सम्पूर्ण संसार में विद्यमान है, विश्वास करो। वह शक्ति सदैव तुम्हारे साथ रहेगी, तुम्हारी रक्षा करेगी और तुम्हें छोड़ कर कही नही जायेगी। ऐसा सम्यक् श्रद्धान करने से तुम्हारे दुःख और कष्ट सुख के रूप में परिवर्तित हो जाएंगे और जिन बातों का तुम्हे भय है वे सब तुम्हारे लिये शांति और कल्याण का कारण हो जाएंगी।

प्रेम, पवित्रता, सत्य और उदारता को कभी न त्यागो कारण कि ये ही गुण श्रम और साहस के साथ मिलकर तुम्हें कल्याण के मार्ग पर ले जाएंगे। जिन लोगों का यह सिद्धांत है कि 'आप सुखी जग सुखी' अर्थात् पहले अपना भला सोचो, पीछे दूसरों का, वे भूल पर हैं। तुम उनकी बातों में न आओ। इसके ये अर्थ हैं कि दूसरों की कोई चिंता न करो और केवल अपने ही सुख-साधन की चिंता में लगे रहो। जो लोग ऐसा करते हैं, उन के लिये एक दिन ऐसा आएगा कि जब सब लोग उन्हें छोड़ देंगे और वे अकेले पड़े हुए दुःख में चिल्लाएंगे तो कोई भी उनकी नहीं सुनेगा और न कोई उन्हें मदद देगा। दूसरों का कोई विचार न करके केवल अपनी ही चिंता करना मानो प्रत्येक उत्तम और श्रेष्ठ सुख को रोकना और पक्षपात से काम लेना है। अपनी आत्मा को बढ़ाओ और अपने हृदय को दूसरों के प्रति प्रेम और सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिये उदार बनाओ। इससे तुम्हें असीम आनन्द देगा और उच्च और स्थाई सुख की प्राप्ति होगी।

जिन लोगों ने नेकी और सच्चाई का रास्ता छोड़ दिया है, उन्हें दूसरों के सामने अपनी रक्षा करने की जरूरत है, परन्तु जो लोग सदा नेकी पर चलते हैं उन्हें इस प्रकार की रक्षा की कोई जरूरत नहीं है। यह केवल कहने की ही बात नहीं है। आजकल भी ऐसे आदमी मौजूद हैं कि जिन्होंने सत्य और विश्वास के बल पर कभी किसी प्रकार के विरोध की चिंता नहीं की और विरोध के होने पर भी जो अपने मार्ग से कभी विचलित नहीं हुए और उन्नति के शिखर पर पहुँच गए। इसके विपरीत जिन्होंने उनका विरोध किया, उनको हानि पहुंचानी

चाही वे स्वयमेव पराजित होकर पीछे हट गए और अवनत दशा में पड़ गये।

जिन अन्तरंग गुणों को नेकी और भलाई कहते है उनके होने से मनुष्य बुराई की सम्पूर्ण शक्तियों से सुरक्षित रहता है और परीक्षा के समय और भी अधिक दृढ़ हो जाता है। उन गुणों को अपने में उत्पन्न करना मानो अक्षय सुख और सफलता को प्राप्त करना है।